Vashist
TAKE THE LIGHT FROM WHERE EVER IT COMES, RIGVEDA

ॐ वशिष्ट

वर्ष १ | वैसाख ज्येष्ठ २०२४ | अप्रैल मई १९६७ | अंक ४

मुख्य सम्पादक
कविराज किशोर चन्द
भारद्वाज वैद्य शास्त्री

मुख्य प्रबन्धक
सोमनाथ तेजपाल
फोन : २६२६३३

वार्षिक शुल्क
विशेष ११ रु०
साधारण ५ रु०

कार्यालय :-
१०४-ए,
कमला नगर.
दिल्ली-७



भगवान श्री परशुराम

श्रीराम ! भार्गव ! भवच्चरणारविन्दमूलं शरण्यमधुना वयमागताः स्मः ।
कारुण्य पूर्णसदृशा किल नोऽनुगृह्य शक्तिं निजामनय नाशकरीं प्रदेहि ॥

सम्पादकीय

प्रिय बन्धुओ !

आज का समय मेरी दृष्टि में उन्नति की ओर अग्रसर न होकर पतन की ओर जा रहा है। आप लोगों ने सम्भवतः बाल्मीकि रामायण के उस स्थल का पाठ किया होगा जिस स्थल में महाराज भरत के ननसाल से लौटने पर भगवान श्री राम के राज्य से निर्वासित होकर बन में भटकने की रोमाँचकारी घटना से उद्विग्न होती हुई माता कौशल्या ने भरत को कहा था।

राज्य कामयमानस्य प्राप्तं राज्य मकण्टकम्।
सम्प्राप्तं बत कैकेय्या शीघ्रं क्रूरेण कर्मणा ॥

अर्थात्–"हे भरत अब क्यों मगरमच्छ के समान आँसु वहा रहे हो मुझे यह दृढ़ निश्चय है कि तेरे निर्देश से ही तेरी माँ केकैयी ने क्रूर कर्म के द्वारा यह सब कुछ किया है। अब तुझे अकंटक राज्य मिल चुका है। अब रोने की क्या बात है ?"

इस कटाक्ष को सुन कर भरत ने कई सौगन्धें खाईं. एक शपथ में उन्होंने कहा कि—

विप्र लुप्त प्रजातस्य यत् पाप ब्राह्मणस्य ह।
तत् पापं भवेत्तस्य यस्यार्योऽनुमते गतः ॥

अर्थात्–"हे! माता जिस ब्राह्मण के प्रदेश में वैदिक संस्कृति और आर्य मर्यादा का लोप हो जाय और वह उस लुप्त होती जा रही संस्कृति को देखता रहे उक ब्राह्मण को जो पाप लगता है वही पाप मुझे लगे और मैं महान पापी कहलाऊँ यदि मेरी अनुमति से श्री रामचन्द्र जी बन में पधारे हों।"

बन्धुओ, आपने इस सम्वाद से यह हृदयङ्गत किया होगा कि ब्राह्मण का कितना महान उत्तरदायित्व है, इसलिये जब कभी देश की दुर्व्यवस्था का क्रूर चित्र ब्राह्मण के सामने आया तो उसने संसार का नेतृत्व किया और अपनी गिरती हुई मर्यादा को पुनः अपना प्रतिष्ठि स्थान दिया। महाराज मनु ने एक स्थान पर लिखा है :—

धर्मो विद्वत्व धर्मेण सभायत्रोप तिष्ठते।
शल्यं चास्य न कृत्तन्ति विद्वास्तत्र सभा सदाः ॥

धर्म के सीने में जव अधर्म बरछी मारकर उसे घायल कर देता है तो वह कराहता हुआ वेदों के विद्वान ब्राह्मणों की सभा में अपने दुःख को दूर करने के लिये प्रवेश करता है यदि उनमें से कोई भी वेद विद्वान उस कराहते हुए धर्म की दीनताभरी वाणि को हृदय से नहीं सुनता तो वह राष्ट्र जिसका कि उत्तरदायित्व उस ब्राह्मण पर है, वह और वह ब्राह्मण महान स्वार्थी, पापी और घृणित बन जाता है।

इन घटनाओं से हमारा प्राचीन इतिहास भरा पड़ा है, आपने कई बार सुना होगा कि धर्म के पतन के कारण कराहती हुई एक राजकन्या ने अपने महल के पास से गुजरते हुए एक उद्‌भट विद्वान कुमारल भट्ट को ललकारते हुए कहा था।

किं करोमि क्वगच्छामि को वेदानुद्धरिष्यति।

अर्थात्–"मैं क्या करूँ ? कहाँ जाऊँ? इस वैदिक धर्म का कौन उद्धार करेगा ?" यूँ कहिये कि कौन धर्म के सीने में चुभी हुई बरछी को बल पूर्वक निकाल कर उसे शाँत एवं सुखी बनायेगा। उस ब्राह्मण ने इस व्यथित वाणि को सुना और तुरन्त विह्वल होकर उसके मुख से निकला।

मारुदिहि वरारोहे भट्टा चार्योस्ति भूतले।

अर्थात्–"ए देवी ! रोओ नहीं, मैं भट्टाचार्य कुमारल भट्ट जब तक इस भू-मण्डल पर विद्यमान हूँ मैं अपने ब्राह्मण कर्तव्य का पालन करूँगा और पतन की ओर जा रही आर्य मर्यादा का पुनरुद्धार करूँगा।

इस ब्राह्मण ने अपना सारा जीवन देश की मर्यादाओं को ऊँचा करने के लिये अर्पित कर दिया। समय आया जबकि क्षत्रिय लोग अपने बाहुबल से मदान्ध होकर अपनी मनमानी करने लगे, तब उनके अत्याचारों की सीमा न रही। उनका धर्म था दीन और दुखियों के परित्राण के लिये अपने बाहु-बल द्वारा अस्त्र और शस्त्रों का प्रयोग करना, गिरती हुई धर्ममर्यादा को बचाना जैसा कि भगवान कृष्ण ने कहा है —

यदा यदाहि धर्मस्य ग्लानिर्भवतिभारत।
अभ्युत्थान मधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहं॥
परित्राणाय साधूनाँ विनाशाय च दुष्कृताँ।
धर्म संस्थापनार्थाग सम्भवामि युगे युगे॥

अर्थात्–"हे !अर्जुन, जब कभी धर्म के पाओं फिसलने लगते हैं, दीन दुखियों और साधुओं पर अत्याचार बढ़ते हैं तब मैं उस धर्म की मर्यादा स्थिर करने के लिए एक नया रूप धारण करके आया करता हूँ, उन पापियों का विनाश और महात्मा लोगों का आश्वासन व रक्षा—यह दोनों काम मेरे इस जीवन का लक्ष्य होते हैं। परन्तु

ऐसों को जन्म्यो जग मांहि
सम्पति पाय जाहि मद नाँहि।
तुलसीदास

इस कथन के अनुसार बाहुबल व राज्य ऐश्वर्य पाकर क्षत्रिय जाति अत्याचार पर उतर आयी थी। अनेकों घटनायें हुईं जबकि बड़े २ वेद विद्वानों, तपस्वियों को भी पशु बल का शिकार होना पड़ा, ऐसे समय में महात्मा जमदग्नि, जो कि पाकिस्तान और अफगानिस्तान की मध्यवर्ती सीमा पर जमरोध स्थान पर निवास करते थे और जो महा तपस्वी और वेदों के धुरन्दर विद्वान माने जाते थे। जिनका दैनिक कार्य स्वाध्याय, तपस्या व यज्ञ था तथा शिष्यों के पठन पाठन में समय व्यतीत होता था उन पर एक अत्याचारी राजा सहस्रबाहु ने आक्रमण कर दिया और उस ब्राह्मण की अपनी यज्ञ भूमि के पास ही हत्या कर दी और स्वयं विजय दुन्दुमी बजाता हुआ काबल की ओर लौट गया।

अतिशय रगड़ करे जो कोई
अग्नि प्रगट चंदन में होई।
तुलसी दास

इस कथन के अनुसार महाराज परशुराम जो उस समय के माने हुए विद्वान होने के साथ साथ अद्वितीय धनुर्धारी और बल शाली ब्रह्मचारी थे वे अपने पिता (महाराज जमदग्नि) की निर्मम हत्या को देख कर रोये नहीं परन्तु उन्होंने समझा कि यह अधर्म है, यह क्षत्रियों का पतन है इसलिए उन्होंने प्रतिज्ञा की कि मैं जब तक क्षत्रियों में उबर रहे इस पशु बल व अधर्म का समूल उन्मूलन नहीं कर लेता तब तक पिता की अंत्येष्टि पर किये जाने वाले तर्पण को नहीं करूँगा, इन पापी क्षत्रियों का रक्त ही मेरे पिता के तर्पण में जलदान होगा, यह एक अद्भुत-प्रतिज्ञा थी – कहा गया है :—

॥ एकः क्रुद्धो ब्राह्मणो दृन्तिराष्ट्रं ॥

अर्थात्–"यदि एक ब्राह्मण किसी अत्याचार से क्रुद्धहो कर एक भीषण प्रतिज्ञा करले तो समूचे राष्ट्र का तख्ता पलट देता है।" भगवान परशुराम के पास न सेना थी न साधन किन्तु एक अदम्य उत्साह था और पाप करने वाले पापियों के प्रति घृणा का बवंडर था। उनके पास बाहुबल के साथ मस्तिष्क बल था इन दो शक्तियों को साथ लेकर वे मैदान में उत्तर आये अपने जीवन में उन्हें कई बार आशा हुई कि अब इस अधर्म की जड़ें खोखली हो चुकी है ज्योंहि यह आशा आती त्योंहि वे स्वयं अस्त्र-शस्त्रों को एक ओर रखकर आध्यात्म चिन्तन में लग जाते। इस प्रकार की घटनायें सम्भवतः २१ बार हुईं परन्तु जब भगवान श्री राम चन्द्र इस भूमि पर पधारे तो उनके धर्म रक्षक रूप को देख-कर इनको दृढ़ निश्चय हो गया कि मेरा उद्देश्य अब पूर्ण हो चुका है।

यह भगवान परशुराम ब्राह्मणों के आदर्श हैं अब हम उनकी जन्म तिथि धूमधाम से मना रहे हैं उनका उत्तराधिकार हमें प्राप्त है इसलिए मैं अपने प्रिय बन्धुओं से अनुरोध करूँगा कि वह इस महा पुरुष के प्रति आभार प्रकट करते हुए यह बात न भूलें कि हमारा कितना बड़ा उत्तरदायित्व है। और हम राष्ट्र के शरीर को जीर्ण करने वाली कुप्रथाओं को दूर करने के लिए कटिबद्ध रहें। हम स्वयं धार्मिक बनें, लोगों को धार्मिक बनायें, अधर्म और दुर्व्यवस्था को कुचलने के लिये हम सदा खम ठोक कर आगे बढ़ें और अपने कर्तव्य को निभायें।

यदि आज संयोगवश श्री परशुराम जी को संसार में फिर से अवतरित होना पड़े तो निश्चित रूप से आजतक के सभी सामाजिक राजनीतिक और आर्थिक भी, व्यवस्थाओं में मौलिक सुधार करने पड़ें और मानवता को एक नई समचेतना वस्था की उपलब्धि की ओर ले जाना पड़े। संसार में सबसे अधिक निपीड़ित देश भारत में ज्ञान और विज्ञान के युग में, कल्पना के आकाश के उच्चतम स्तर तक पहुँचने के स्वप्नों में भी मानवता नरक के निम्नतम स्तर में शिथिल हो रही है हमारे उन्नततम आध्यात्मिक, नैतिक और कलात्मक आदर्श जो हमारे पूर्वजों की देन थे आज परिहास की तरह लगते हैं। जन-जीवन उत्तरोत्तर अधिक विकल, विशृंखल; दलित और शोषित होता जा रहा है। आज आवश्यकता है यथार्थवादी उपायों और संगठित प्रयत्नों द्वारा मानव को व्यवस्थित और संतुलित करने की, आजसारे विश्व में विश्व-शान्ति, मानवीय स्वतंत्रता और मानवीय कल्याण के पक्ष में बड़ी-बड़ी लच्छेदार आदर्शात्मक बातें सुनने को मिलती हैं परन्तु वास्तविकता की एक ही परख में उनका शेष शून्य ही रहता है। प्रभु सहायक हों। इति

किशोर चन्द्र
भारद्वाज

आवश्यक सूचना

आप यह जानकर प्रसन्न होंगे कि अखिल भारतवर्षीय ब्राह्मण महासभा (रजि०) दिल्ली इस वर्ष भगवान परशुराम की जयंती का उत्सव १४ मई १९६७, रविवार को 5½ बजे शाम सालवान गर्ल्स स्कूल, राजेन्द्र नगर के हाल में बड़े समारोह से मना रही है। कार्यक्रम अत्यन्त रोचक होगा। बड़े-बड़े विद्वानों के व्याख्यान, कवितायें और भजन होंगे। आपसे सविनय प्रार्थना है कि परिवार सहित ठीक समय पर पधार कर कृतार्थ करें।

निवेदक :—

सोमनाथ तेजपाल	**किशोरचन्द भारद्वाज**	**दौलतराम गंगाहर**
प्रधान	संयोजक	प्रधान मंत्री

राष्ट्र के उन्नेता

भगवान परशुराम तथा समन्वयवाद

श्री पं० अर्जुनदेव जी शर्मा शास्त्री पंजाबी बाग दिल्ली

समन्वयवाद इस संसार का मूलाधार है। जब कभी समन्वयवाद की अवहेलना हुई तभी एक महान् विनाश की आंधी ने संसार को झकझोर कर दिया। आप समन्वयवाद को समझने के लिये वेद का एक मन्त्र पढ़िये। प्रश्न किया गया कि कौनसा राष्ट्र पुण्य भूमि कहलाने के योग्य हो सकता है तो वेद ने कहा—

यत्र ब्रह्म च क्षत्रं च सम्यञ्चौ चरतःसह।
तत् लोकं पुण्यं प्रज्ञेयं यत्र देवाः सहाग्निना॥

अर्थात्— जहाँ ब्रह्म शक्ति और क्षत्र शक्ति दोनों साथ-साथ मिलकर चलते हैं, तथा जहाँ विद्वान् लोग प्रकाशस्वरूप परमात्मा की उपासना में निरत रहते हैं, वह राष्ट्र पुण्य भूमि कहलाता है। इस का तात्पर्य हुआ कि ब्रह्म शक्ति और क्षत्र शक्ति ये दोनों शक्तियाँ समान रूप से जहाँ समुन्नत रहती हैं वह राष्ट्र पवित्र, उत्तम तथा प्रगति शील रहता है जिस देश में केवल ब्रह्म शक्ति ही समुन्नत की जाती है और क्षत्रिय शक्ति का ह्रास हो जाता है, तो बाहर की जातियाँ उस देश को कुचल कर रख देती हैं। जैसा कि किसी नीतिज्ञ ने लिखा है—

शस्त्र शास्त्रोर्मध्ये च, शस्त्र शक्ति गरीयसी।
शस्त्रेण रक्षिते राष्ट्रे, शास्त्र चिन्ता प्रवर्तते॥

अर्थात्—शस्त्र और शास्त्र के मध्य में शस्त्र शक्ति का पहला स्थान है, क्योंकि शस्त्र देश की रक्षा कर लेगा, तो शास्त्रों के पठन पाठन का समय आयेगा। इसका यह तात्पर्य नहीं समझना चाहिये कि इन दोनों शक्तियों को समान रूप से विकसित न किया जाय। राष्ट्र देश रक्षा के लिये क्षात्र शक्ति को समुन्नत करता हुआ और साथ-साथ ब्रह्मशक्ति को कदापि पिछड़ने न दे।

ये दोनों शक्तियाँ एक राष्ट्र की काया को सुरक्षित रखने के लिये परस्पर पूरक हैं, पृथक्-पृथक् नहीं। इसी भावना को स्पष्ट करते हुए महर्षि वेद व्यास ने गीता की समाप्ति पर कहा—

यत्र योगेश्वरः कृष्णः यत्रपार्थो धनुर्धरः
तत्र श्रीर्विजयो भूतिः ध्रुवा नीति र्मतिर्मम॥

मेरा यह अटूट विश्वास है कि जिस पक्ष में योगेश्वर कृष्ण हो, अर्थात् वेद-वेदाङ्गों का तत्वज्ञ पूर्ण ब्रह्मचारी व्यक्ति हो और जहाँ अर्जुन जैसा अद्वितीय धनुर्धर हो, वहाँ सदैव विजय तथा दृढ़ नीति का निवास होता है।

आप समझ गये होंगे कि समन्वय वाद क्या है। सन्त प्रवर तुलसीदास ने ज्ञान तथा कर्म और भक्ति के समन्वय पर बल दिया है। उनका कहना है केवल ज्ञानी तथा केवल कर्मठ होना बेकार है। ये दोनों एक दूसरे पर आधारित हैं। अस्तु, अनेक प्रकार के समन्वय समय-समय पर चलते रहे, किन्तु राष्ट्र को बलशाली बनाने के लिये चातुर्वर्ण्य समन्वय सर्वोपरि माना गया, तभी तो इस राष्ट्र की विराट् काया को चार भागों में वेद ने बांटा -

ब्राह्मणोस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः
उरूतदस्य यद् वैश्यः पद्भ्यां शूद्रोऽजायत।

ब्राह्मण इस विराट् राष्ट्र का मुख, क्षत्रिय भुजाएँ, वैश्य उरु (जांघे) तथा शूद्र पाद के समान हैं। सिर पर चोट लगने की आशंका हो तो भुजाएँ उठकर उसका त्राण करेंगी। शिरो वेदना होने पर ये भुजाएँ उसे सहलाएँगीं। मुख मण्डल को पोंछकर परिशुद्ध करेंगी। यदि हाथ पर चोट लग जाए तो आंख क्षमाछब बरसने लगेंगी। अंगुली पिस जाए तो मुँह उसे अपने में रख कर उसे उष्णता प्रदान

करेगा । इस प्रकार एक दूसरे की रक्षा करना मस्तिष्क और हाथों का परम कर्तव्य दिखाई देता है । यदि एक दूसरे की अवहेलना करने लग जायेंगे, तो यह समस्त शरीर पतनोन्मुख हो जायेगा ।

यही दशा राष्ट्र की है । जब तक ब्रह्मशक्ति, क्षत्रिय शक्ति की सहायक न बनेगी और उन्हें समय-समय पर राष्ट्र कल्याण के उद्देश्य से सत्पथ पर न लायेगी तभी तक राष्ट्र पुण्यभूमि तथा प्रगति शील न हो सकेगा । ब्राह्मण घोषणा करता था –

"स श्रियि लक्ष्म्यां च वर्धताम्, यस्याह्मस्मि पुरुरोहितः।'

अर्थात् –मैं जिसका अगुआ तथा पथ प्रदर्शक हूँ, वह कल्याण तथा सम्पत्तियों में सदा अग्रसर रहेगा । क्षत्रिय ब्राह्मण की आवश्यकताओं तथा परित्राण को सुसम्पादित करने के लिये कटिवद्ध रहता था । वे दोनों जिस उद्देश्य को सम्मुख रख कर कंधे से कंधा मिला कर खड़े हो जाते थे, वे राष्ट्र की काया पलट कर रख देते थे । समर्थ राम दास ने शिवाजी का नेतृत्व कर मराठा राज्य की स्थापना कर दी और महापापी यवनों को कम्पायमान कर दिया । भूषण कवि ने लिखा है –

गौरां गनपति आपन औरन को देत ताप ।
अपने मकान सब भार गये दब की ।।
सिद्ध की सिधाई जाती, मथुरा मसीद होती ।
शिवाजी न होते, तो सुनती होती सब की ।।

कूटनीतिज्ञ चाणक्य ने चन्द्रगुप्त का पथ-प्रदर्शन किया और एक विशाल मौर्यराज्य की स्थापना की । जब कभी इस समन्वय वाद की अवहेलना हुई तभी महान् रक्तपात हुआ और राष्ट्र की दोनों शक्तियों का ह्रास हुआ । त्रेतायुग के आरम्भ में एक समय आया, जबकि क्षत्रिय लोग इस समन्वय को भूल गये और राजमद, शक्तिमद, धनमद तथा अधिकारमद ने उनके मस्तिष्क में विकार उत्पन्न कर दिया –

कर्णौ बधिरयति, नयनमन्धयति, विकृतयति गात्रयष्टिम् सम्पद् रोगोऽग्रमद् भुतो राजन् !

ये महाराज विदुर के वाक्य हैं कि हे राजन् ! यह सम्पत्ति का रोग अद्भुत है । यह कानों को बहरा कर देता है, आँखों से यथार्थ दीखना बंद हो जाता है और शरीर भी विकृत हो जाता है ।

ऐसे विकट, कराल समय में एक महान् व्यक्ति ने जन्म लिया । जिस का नाम 'पर्शु राम' था । इस अकेले व्यक्ति ने राष्ट्र की काया पलट दी । बाल्मीकि रामायण में लिखा है कि उत्तर भारत में ऋचीक नामक ऋषि थे । उनके घर सत्यवती के कोख से जमदग्नि नामक ऋषिकुमार का जन्म हुआ जमदग्नि महान् तपस्वी, वेद, वेदाङ्ग वेत्ता थे । उत्तर भारत से चलकर वे काम्बोज (काबुल) देश की सीमावर्ती हिन्दुकुश की पर्वत शृंखलाओं में कुटिया बना कर निवास करने लगे । यह वही स्थान है, जहाँ कि आजकल 'जमरोध' (पाकिस्तान) बसा हुआ है । उस समय कावुल का शासन सहस्रबाहु के हाथ में था । सहस्रबाहु राजसत्ता से मदोन्मत्त था । उसने जमदग्नि के आश्रम पर पहुँच कर उसकी यज्ञभूमि के समीप हत्या कर दी ।

पर्शु रामजी उस समय आश्रम में नहीं थे । लौटने पर उन्हें इस रोमाँचकारी घटना की सूचना मिली । उस वीर वालक का हृदय क्रोध से विह्वल हो गया । एकाएक मुँह से ये शब्द निकले –"ओ पापी क्षत्रिय ! तूने मदोन्मत्त होकर मेरे पूज्य पिता की हत्या कर दी । कहाँ तपस्वी ब्राह्मणों का सम्मान करना क्षत्रियों का कर्तव्य और कहाँ यह निर्मम हत्या । क्षत्रिय लोग राजमद से गर्भित होकर राष्ट्र को पतन की ओर ले जा रहे हैं । यह कह कर उसने स्नान किया । प्रभुवन्दना की । यज्ञाग्नि को प्रज्वलित किया और वेद मन्त्र पढ़ा– "**अग्ने ! व्रत पते व्रतं चरिष्यामि । तच्चकेयम् ।**" हे प्रकाश स्वरूप प्रभु ! मैं व्रत लेता हूँ । भगवन् ! मुझे शक्ति दो ।" यह कह कर अग्नि के सम्मुख खड़े होकर अपनी भुजाओं को ऊपर उठा कर प्रतिज्ञा की– "मैं इस राष्ट्र की मर्यादा को समुन्नत करने के लिये अभिमानी तथा कर्तव्य भ्रष्ट क्षत्रियों को सत्पथ पर लाऊँगा । यदि

कोई पापी क्षत्रिय सिर उठाएगा, तो उसे कुचल कर रख दूँगा। इन दुष्ट विधर्मी राजाओं के रक्त से अपने पूज्य पिता का तर्पण करूँगा।''

प्रतिज्ञा की पूर्ति के लिए उन्होंने अपनी शारीरिक शक्ति को बढ़ाया। अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों के प्रयोग सीखे। महेन्द्र पर्वत पर रहकर अपनी समस्त शक्तियों को विकसित किया। पुनः माता के चरणों को छू कर उसका आशीर्वाद प्राप्त किया। अब पर्शु राम जी मैदान में उतर आये और गर्वित क्षत्रियों को ललकारा। सैकड़ों वीर क्षत्रिय अपने राज्यों को छोड़कर भाग खड़े हुए। जो भी राज्य रिक्त होता उसका शासत ब्राह्मणों के हाथ में दे दिया जाता।

परशुरामजी का व्यक्तित्व सन्त तुलसीदास जी ने वर्णित करते हुए कहा है—

गोर सरीर भूति भल भ्राजा,
भाल विसाल त्रिपुण्ड विराजा।
सीस जटा ससिवदन सुहान,
रिसवस कछुक अरुन हाइ आवा।।
भ्रुकुटि कुटिल नयन रिस राते,
सहजहुं चितवत मनहुं रिसाते।
वृषभ कध उर बाहू विसाला,
चारु जनेऊ माल मृगछाला।
कटि मुनि बसन तून दोउ बांधे,
धनु सर कर कुठारु कल काँधे।

(तुलसीदास)

भगवन् परशुराम के इस स्वरूप में ब्राह्मणत्व और क्षत्रियत्व का कैसा अनूठा गठबंधन दृष्टि गोचर होता है। एक ओर गोरे शरीर पर भस्म का लेप और मस्तक पर सुन्दर तिलक था और चन्द्र के समान मुख पर जटाएँ लहरा रही थीं, तो दूसरी ओर अत्याचारी क्षत्रियों के अत्याचारों के स्मरण से चेहरे पर लाली दौड़ रही थी। एक ओर महाराज के कंधे वृषभ के समान थे और छाती, तथा भुजाएँ लंबी चौड़ी थीं तो दूसरी ओर गरांडील शरीर को मृगछाला से ढका हुआ था और यज्ञोपवती दिखाई दे रहा था। एक ओर भोज पत्र कटि पर धारण किए हुए थे, तो दूसरी ओर कटि पर एक नहीं प्रत्युत दो तूणीर (तरकस) वाणों से भरे हुए बाँधे हूए थे और हाथ में धनुष वाण और चमचमाता परसा कंधे पर रखा हुआ था।

बाल्मीकि जी ने लिखा है कि भगवान परशुराम ने जब श्री राम द्वारा सीता परिणय के पश्चात् अयोध्या की ओर लौटती हुई क्षत्रियों की बरात को मार्ग में रोक कर युद्ध के लिए ललकारा तो महाराज परशुराम के मामा महर्षि विश्वामित्र ने उन्हें कहा -''वत्स परशुराम! अब क्षत्रियों में अभिमान का लेश शान्त हो चुका है, आप इस प्रकार के युद्धों को छोड़ दो।'' परशुराम जी ने विनय पूर्वक कहा—

प्रायश्चित्तं चरिष्यामि,
पूज्यानां करों व्यति क्रमात्।
नाहं वै परित्यक्षामि.
शस्त्रगहण महाव्रतभ् ।।

(बाल्मीकि)

''महाराज! मैं आपकी आज्ञा की अवहेलना के महापाप का प्रायश्चित कर लूंगा, परन्तु शस्त्रग्रहण के महाव्रत का लोप नहीं करूंगा जब तक कि मुझे यह निश्चय न हो जाये कि अब क्षत्रिय मदान्ध नहीं रहे।''

श्रीराम ने विनय पूर्वक कहा—

'विप्रेशस्त्र ग्रहण गुरुणः साहसिक्याद् विभेमि।, (अनर्ध राघव) अर्थात—मान्य भार्गव! मैं ब्राह्मण पर शस्त्र प्रहार से डरता हूँ, 'तो उन्होंने इस वाक्य से अपने इस वीरवेश का अपमान समझकर कहा—

निपटहिं द्विजकरि जानहिं मोहि,
मैं जस विप्र सुनावहुँ तोही।
चाप स्रुवा सर आहुति जानू,
कोय मोर अति घोर कृसानू।।

(शेष पृष्ठ ३९ पर)

यदि हम सब एक न हो जायेंगे

श्री पं० अशोक शर्मा शर्मा क्लाथ हाऊस गांधी नगर दिल्ली।

यदि हम सब एक न हो जायेंगे,
तो हम सब मिट्टी में मिल जायेंगे।
तो हम किस प्रकार उन्नत हो पायेंगे!!
यदि हम सब एक न हो जायेंगे!
भिन्न-भिन्न रिवाज और भाषा होगी,
तो समान न सबकी अभिलाषा होगी।
यदि हम में एक समानता न होगी!
तो भाई जैसी प्रीति कैसे होगी?
तो हम सब राह से बिछड़ जायेंगे।
यदि हम सब एक न हो जायेंगे।
हमें दीनता है देश से भगानी,
सुख समृद्धि की नदी बहानी!
पशु बुद्धि से मानव बुदि लानी,
इस राह पर कभी सफल न हो पायेंगे
यदि हम सब एक न हो जायेंगे॥
शान्ति की यह विजय पताका है फहरानी,
देश सेवा हेतु कायरता है दूर भगानी!
इन राहों पर हम कैसे चल पायेंगे,
देश को समृद्धिशाली कैसे बना पायेंगे।
उन्नत देशों में इसकी गिनती कैसे करायेंगे!
यदि हम सब एक न हो जायेंगें!!

श्री परशुराम जयंती

बैसाख शुक्ला तृतीया को भगवान श्री परशुराम ने अवतार धारण किया था। ब्राह्मण कुल शिरोमणि भगवान् श्री परशुराम की जयंती सारे देश में बड़ी धूम-धाम से मनाई जाती है। भारत की राजधानी देहली, भरतपुर, अमृतसर, पूना, सीतापुर ,बम्बई, अक्कलकोट तथा अन्य-अन्य अनेक नगरों में सोत्साह मनाये जाने वाले इस समारोह में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आदि सभी वर्णों और वर्गों के लोग बड़ी श्रद्धा से भाग लेते हैं। भगवान श्री परशुराम क्षत्रियों के विरोधी नहीं थे, उन्होंने संहार किया था दुष्ट क्षत्रिय शासकों का, न कि सब क्षत्रियों का। भीष्म पितामह जैसे क्षत्रिय वीर भगवान श्री परशुराम के ही शिष्य थे। इस वर्ष श्री परशुराम जयंती का यह महान पर्वोत्सव 12 मई को आ रहा है। आशा है धर्मानुरागी सज्जन प्रत्यक नगर में श्री परशुराम जयंती का यह उत्सव धूम-धाम से मनाने की व्यवस्था कर धर्म प्रचार के महान पुन्य के भागी बनें जिससे हम भारत के राष्ट्रीय सर्वदा स्वतन्त्र और विश्व विजयी बनकर सभी लोगों के न्याययुक्त समुचित जीवन में सहयोग दे सकें।

अन्त में हम भगवान् श्री परशुराम से प्रार्थना करेंगे कि मानव मात्र के हृदयों में सद्बुद्धि रूप से वे अवतार लें और संसार में होने वाले अन्याय का विनाश करके न्याय की स्थापना करें, तथा मानव मात्र को ब्राह्मण बनायें।

१. **वैद्य बृहस्पतिदेव त्रिगुणा**, प्रधान
२. **श्री नित्यानन्द दत्त**, मंत्री

निवेदक

श्री परशुराम जयन्त्युत्सव दिल्ली
फोन : 611221
श्री त्रिगुणेश्वर महादेव मन्दिर
ग्राम सराय कालेखाँ, निकट निजामुद्दीन,
रेलवे स्टेशन, नई दिल्ली-13.

अखिल भारतवर्षीय ब्राह्मण महासभा (रजि०) दिल्ली श्री परशुराम जयंत्युत्सव समिति भोगल नई दिल्ली की इस समिति के प्रधान श्रद्धेय बृहस्पति देव जी त्रिगुणा (वैद्य) व मंत्री महोदय श्री नित्यानन्द जी दत्त भारद्वाज के अति आभारी हैं जिन्होंने सभा को बड़ी उदारता से श्री भगवान परशुराम जी का फोटो ब्लाक व अन्य साहित्य सामग्री, परशुराम स्तोत्र व श्री भार्गव कवच प्रदान किये हैं और साथ ही अनुमति दी है कि हम अपने मासिक पत्र "वशिष्ट" में इस साहित्य में से लेख दे सकते हैं। धन्यवाद!

सम्पादक

।। श्री ।।

भगवान श्री परशुराम

श्री १००८ आचार्य अमृतवाग्भवजी महाराज

भारतीय अनन्त वाङ्मय साहित्य में भगवान श्री परशुराम की महिमा का विस्तृत से विस्तृत वर्णन है। यद्यपि किसी एक ही पुस्तक में सम्पूर्ण वर्णन न आया हो और ऐसा होना सम्भव भी नहीं है, फिर भी स्थान-स्थान पर जो विशेष वर्णन मिलते हैं उनसे भी लाभ उठाया जा सकता है।

श्री परशुराम जी भगवान विष्णु के अवतार माने जाते हैं। जहाँ चौबीस अवतार माने जाते हैं वहाँ भी भगवान श्री परशुराम जी हैं, दशावतार-गणना में भी उनका नाम आता है तथा सात अवतारों में भी उनका नाम विद्यमान है। इससे निश्चित रूप से पता चलता है कि भगवान श्री परशुराम का अवतार सर्वमान्य है। अवतार का प्रयोजन सभी के मत में यही है कि अधर्म एवं अन्याय का नाश, एवं धर्म तथा न्याय का प्रतिष्ठापन - यह कार्य भगवान श्री परशुराम की अवतार लीला में पूर्णरूप से संगत होता है।

अवतार दो प्रकार के होते हैं, एक ज्ञान शक्ति प्रधान एवं दूसरा क्रिया शक्ति-प्रधान। ज्ञान शक्ति-प्रधान अवतार प्रायः चिरंजीवी होते हैं। क्रिया शक्ति-प्रधान अवतार अपेक्षा कृत चिरंजीवी नहीं होते हैं। भगवान परशुराम में जहाँ क्रिया शक्ति की प्रधानता है उससे कहीं अधिक ज्ञान शक्ति की प्रधानता है, इसी कारण वे चिरंजीवी भी हैं। साधकों को उसी शरीर में आज भी उनके दर्शन प्राप्त हो सकते हैं, उनके शरीर परित्याग का उल्लेख किसी भी ग्रन्थ में नहीं मिलता है सभी अवतारों से भगवान श्री परशुराम के अवतार में एक विशेषता यह देखने में आती है कि वे अपनी दुष्ट-संहार-कारिणी लीला में किसी दूसरे की सहायता की आवश्यकता नहीं रखते। उनके अन्दर जो महान शक्ति थी उसका उन्होंने भगवान शिव की अराधना करके साक्षात्कार कर लिया था। पितृभक्ति का तो उनके अन्दर इतना आधिक्य है कि पिता की आज्ञा से उन्होंने अपनी माता तथा बड़े भाइयों का शिर काट डाला था।

मूर्खों की दृष्टि में यह कार्य भले ही बुरा कहा जाय किन्तु भगवन श्री परशुराम पिता की सामर्थ्य को पूर्ण रूप से जानते थे और उनके पिता ने उनकी परीक्षा बड़ी कड़ाई से ली जिस परीक्षा में भगवान श्री परशुराम शत प्रतिशत खरे पार हुए। इसके साथ उनकी मातृ भक्ति एवं मातृ प्रेम भी परमोत्कृष्ट हैं। उनके पिता जमदग्निकी आज्ञा जो मातृ बध व भ्रातृ बध के लिए दी गई थी, उसके पूर्ण पालन से अति सन्तुष्ट होकर श्री जमदग्निने जब वरदान माँगने को कहा, तो श्री परशुराम जी ने यही वर माँगा था कि मेरे भाई एवं माता पुनः जीवित हो जायें और मेरे किये हुए इस बध का उन्हें ज्ञान न रहें। पिता ने उनकी इस प्रार्थना को पूर्ण कर दिया। इसके अतिरिक्त उन्हें अपनी अत्यन्त प्रसन्नता के कारण स्वच्छन्द चिरंजीविता एवं सभी कार्यों में सफल होने का वरदान भी दिया। श्री परशुराम की वीरता की समता दूसरा कौन कर सकता है? कार्तवीर्य्य अर्जुन ने परशुराम के पिता श्री जमदग्नि के आश्रम में आने पर श्री जमदग्नि द्वारा किए हुए [illegible]-सम्पन्न समुचित

अतिथि-सत्कार से सन्तुष्ट होने के स्थान में बलात् श्री जमदग्नि की एक मात्र सम्पत्ति कामधेनु-होमधेनु गाय को अपने सेवकों द्वारा छीन कर अपनी राजधानी में ले जाना एक घोर अन्याय था, किन्तु श्री परशुराम जी आश्रम में उपस्थित न थे, जब वे आश्रम पर आये और पिता की जब आज्ञा मिली कि अपनी गौ को वापिस ले आओ, तब उन्होंने अपने दिव्य धनुष वाण और परशु आदि शस्त्र अस्त्र लेकर अकेले ही माहिष्मती पर चढ़ाई की थी। कीर्तवीर्य्य अर्जुन ने समझाने बुझाने पर भी गौ नहीं दी उल्टे अपनी शस्त्रास्त्र सन्नद्ध सेना को लेकर उनके ऊपर आक्रमण किया, किन्तु महान वीर श्री परशुराम अग्नि तुल्य थे, अग्नि की एक छोटी से छोटी चिनगारी भी कपास के बड़े बड़े ढेर भस्म कर डालती है। उसी प्रकार भगवान परशुराम ने कार्तवीर्य की सत्रह अक्षौहिणी सेना को देखते ही देखते समाप्त कर डाला। कीर्तवीर्य के सहस्त्र करों को काटकर उसका सिर धड़ से अलग कर अपनी गौ को पुनः लेकर आश्रम पर लौट आये। इससे बढ़कर और क्या वीरता हो सकती है।

इस पर भी उनके पिता जमदग्निने कहा ,वत्स ! राजा का बध नहीं करना था और इसके बध के प्रायश्चित के लिए तुम एक वर्ष तीर्थाटन करो। परम श्रद्धालु श्री परशुराम, पिता की आज्ञा शिरोधार्य करके एक वर्ष तीर्थाटन कर पुनः आश्रम पर लौट आये। किन्तु श्री जमदग्नि का परिवार एवं भगवान श्री परशुराम जितने ही सात्विक थे, उतने ही कार्तवीर्य्य अर्जुन के पुत्र तमोगुणी अब्रह्मण्य और अत्यधिक दुष्ट हो गये थे— कार्तवीर्य्य अर्जुन की मृत्यु के पश्चात् जो कि श्री परशुराम से भयभीत होकर भाग गये थे उन १००० कार्तवीर्य के पुत्रों ने परशुराम जी की तीर्थ यात्रा के समय में ही आश्रम को नष्ट-भ्रष्ट करके उनके पिता जमदग्नि का सिर काट डाला। जमदग्नि के सिर न काटने के लिए परशुराम की माता रेणुका ने बहुत प्रार्थना की परन्तु उन दुष्टों ने कुछ भी ध्यान न दिया श्री रेणुका माता को विलाप करती हुई छोड़ गये।

तीर्थ यात्रा से लौटने पर श्री परशुराम जी ने अपनी माता की, पिता की, आश्रम की दुर्दशा देखी एवं माता का करुण क्रन्दन तथा पिता के बध का समाचार सुना तभी उनके हृदय में प्रबल क्रोधाग्नि प्रज्ज्वलित हो उठी, और उसी समय दुष्ट क्षत्रियों के वध की प्रतिज्ञा करली। श्री परशुराम जी ने अच्छी तरह देख लिया कि कोई तात्कालिक शासक इस अन्याय का प्रतीकार नहीं कर रहा है, इन अब्रह्मण्य, दुष्ट उद्दण्ड क्षत्रियों को दण्ड देने की क्षमता कोई नहीं रखता है तव उन्हें धर्म रक्षा के लिए सम्पूर्ण दुष्ट विधर्मी क्षत्रियों के बध की घोर प्रतिज्ञा करनी पड़ी। तदनुसार ही कार्तवीर्य के सहस्त्रों पुत्र, पौत्र एवं उनके असंख्य अनुयायी क्षत्रियों के सिर काट-काटकर ढेर लगा दिया। जिससे रक्त की नदी बह निकली और कुरुक्षेत्र के पाँच बड़े-बड़े सरोवर उससे भर गये। यह अतुल कृत्य देखकर संसार भर के क्षत्रिय भय से थर-थर काँपने लगे और अब्रह्मण्यता से दूर रहने लगे।

तात्कालिक जो क्षत्रिय अब्रह्मण्य नहीं थे और जो दुष्ट क्षत्रियों के सहायक नहीं थे, भगवान श्री परशुराम उनके परम स्नेही एवं परम सुहृद थे। क्योंकि भगवान श्री परशुराम क्षत्रियों के विद्रोही नहीं थे, वे तो अब्रह्मण्य एवं दुष्ट मात्र के दण्डदाता थे, उनके इस अवतार कृत्य का उद्देश्य विश्व-कल्याण था, हाँ यह बात दूसरी है कि बहुत से तात्कालिक क्षत्रिय गेहूँ के साथ घुन भी न पिस जाए इस आशंका से इधर-उधर भाग कर छुप गये थे। कई एक ने अपने आपको बचाने के लिए जात्यन्तर को स्वीकार कर लिया था तो कोई एक स्त्री वेश में अपने को छुपाकर त्राण पा रहे थे। एक बार कंस को भगवान श्री परशुराम के दर्शन हुए तो भयभीत होकर कंस ने कहा कि भगवान मैं क्षत्रिय नहीं हूँ मैं तो राक्षस हूँ इसके लिए गर्ग संहिता देख।

भगवान् श्री परशुराम जहाँ इतने वीर थे कि २१ बार दुष्ट क्षत्रियों के बध से पृथ्वी को शुद्ध करना पड़ा उतने ही विशुद्ध त्यागी भी थे। उन्होंने राज पद तथा पृथ्वी का उपभोग स्वीकार नहीं किया। राजा के लिए त्याग के लिए भोग की अनुमति शास्त्रों में मान ली गई है। किन्तु इस भोग की अनुमति ने ही पहले क्षत्र फिर क्षत्रिय पुन; राजा तत्पश्चात् नृप फिर नृपति फिर भूप और भूप के पश्चात् भूपति बनाकर अन्यायी से अन्यायी बना डालने में सहायता दी। यह बात गम्भीर शास्त्राध्ययन से विदित हो सकती है, कि पतन का कारण भोग एवं उत्थान का कारण त्याग होता है।

भगवान श्री परशुराम परम त्यागी थे। उनके जैसा आदर्श त्याग अन्यत्र कहीं देखने या सुनने में नहीं आएगा। उन्होंने २१ बार, दुष्ट क्षत्रियों के संहार के पश्चत् एक सर्वस्त्र दक्षिण विश्वजित नाम महायज्ञ किया था, जिसमें होता को पूर्व दिशा, ब्रह्मा को दक्षिण दिशा, अध्वर्यु को पश्चिम दिशा उद्गाता को उत्तर दिशा एवं अन्यान्य ऋषियों ऋत्विजों को अवान्तर दिशाएँ तथा महर्षि कश्यप को सम्पूर्ण पृथ्वी का मध्म भाग दे दिया था। उनके पिता का और्ध्वदहिक कृत्य भगवान श्रीदतात्रेय ने करवाया था ऐसा सुना जाता है।

भगवान श्री परशुराम से सम्बन्धित सैंकड़ों स्थान इस भूमण्डल पर प्रसिद्ध हैं। उन्होंने ही समुद्र को हटाकर केरल से लेकर (गोवा) गोमान्तक पर्यन्त प्रदेश की सृष्टि की थी, आज भी वह सप्त-कोंकण या परशुराम क्षेत्र के नाम से विख्यात है। आसाम का परशुराम कुण्ड, सीमां प्रांत का परशुपुर, (पेशावर) कुल्लू का निर्मण्ड (परशुराम मंडप), हिमाचल प्रदेश के रेणुका जमदग्नि आदि स्थान एवं परशुराम के चालीस से भी अधिक मन्दिर नर्मदा के किनारे के स्थान, मथुरा के समीप रुणुकता आदि अनेक स्थान सुप्रसिद्ध हैं। भगवान श्री परशुराम, श्री विद्या के उपासक और प्रचारक भी थे।

श्री विद्या की उपासना उन्हें भगवान श्रीदत्तात्रेय से प्राप्त हुई थी। श्री विद्या की उपासना के लिए भगवान श्री परशुराम ने कल्प सूत्र रचा था। जो आज भी "परशुराम कल्प सूत्र" के नाम से सुप्रसिद्ध हैं।

सूचना

"वशिष्ट" के ग्राहक, विज्ञापन दाता, तथा महा-सभा के सदस्य यह जानकर प्रसन्न होंगे कि यदि वह चाहें तो विवाह योग्य वर-कन्याओं के विज्ञापन एक बार मुफ्त छपवा सकते हैं।

सोमनाथ तेजपाल
१०४ ए, कमला नगर,
दिल्ली-७

भगवान परशुराम की जयंती

१२ मई को धूम-धाम से मनाना प्रत्येकब्राह्मण नर-नारी का परम कर्त्तव्य है।

"गंगाहर"

निवेदन

आप के जाति प्रेम को देखते हुए कुछ महीनों से "वशिष्ट" आप की सेवा में पहुँच रहा है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि आप इसे आदर की दृष्टि से देखते हैं। निवेदन है कि आप इसकी ग्राहकता स्वीकार करें और इसका वार्षिक शुल्क विशेष ११ रु० या साधारण ५ रु० शीघ्र ही दस्ती अथवा मनीआर्डर द्वारा भेजने की कृपा करें।

सोमनाथ तेजपाल
फर्म बेलीराम सोमनाथ,
चावड़ी बाजार, दिल्ली-६

भगवान परशुराम का संक्षिप्त जीवन परिचय

श्री पं० सोम .ाथ जी तेजपाल प्रधान अखिल भारतवर्षीय ब्राह्मण महासभा (रजि०) दिल्ली

भगवान परशुराम का स्थान अवतारों में छठा और काम के लिहाज से प्रथम है परन्तु खेद इस बात का है कि मान और पूजा के विचार से आप किसी गिनती में ही नहीं आते। इसका कारण यह है कि आज तक किसी ऋषि अथवा विद्वान को इनका इतिहास लिखने का अवसर ही नहीं मिला और न मिलेगा।

विभिन्न ग्रंथों के अध्ययन से आपका जो थोड़ा बहुत इतिहास मिलता है उससे ज्ञात होता है कि आप बचपन से ही बड़े बुद्धिमान, योद्धा, निर्भय तथा आज्ञाकारी थे। बारह वष की आयु में सारे वेद-शास्त्र पढ़कर पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लिया था। युद्ध विद्या में निपुण होने के लिए आपने शिवजी महाराज की आराधना की। प्रसन्न होकर भोलेनाथ ने आपको पूर्ण युद्ध विद्या सिखाइ। पिता की आज्ञा पाते ही आपने माँ का सिर काट दिया। जब पिता ने प्रसन्न होकर कहा कि कोई वरदान माँगों तो कहा; "महाराज, मेरी माता को जीवित कर दीजिए।" आपने लाखों वर्षों तक तप किया और आज भी कैलाश पर्वत पर तप कर रहे हैं।

हमारा कर्तव्य है कि हम भगवान राम और कृष्ण की भाँति भगवान परशुराम का जन्म दिन भी बड़े उत्साह से मनायें और विष्णु भगवान के छठे अवतार मान कर मन्दिरों में इनकी मूर्तियाँ स्थापित करें और पूजा करें; इन्हें महान योद्धा, महान तपस्वी और महान विद्वान मान कर इनकापूरा सत्कार करें।

वंश : हिन्दु इतिहास में दो ऐसे महर्षि हुए हैं जिनके पास कामधेनु गाय थी—महर्षि वसिष्ठ और महर्षि जमदग्नि। भगवान परशुराम महर्षि जमदग्नि के पाँचवें पुत्र थे। इनके दादा का नाम रच्यक और परदादा का नाम महर्षि च्यवन था जो महर्षि भृगु के पुत्र थे। महर्षि भृगु की ज्योतिष पर लिखी हुई पुस्तक "भृगु संहिता" आज तक प्रसिद्ध है और महर्षि च्यवन का आयुर्वेदिक नुस्खा "च्यवन प्राश" आज भी मुर्दा शरीरों में नया जीवन पैदा कर देता है।

भगवान परशुराम की माता का नाम रेणुका था। आपका बचपन का नाम राम था। आपका जन्म बैशाख मास के शुक्ल पक्ष की तृतीय को हुआ था। आपको धनुष विद्या का शौक था परन्तु उसके लिये कोई ब्राह्मण गुरू न मिलता था। इनकी सच्ची लगन को देखकर महादेवजी ब्राह्मण के रूप में आये और इन्हें धनुष विद्या सिखा कर वरदान दिया, "तुम्हें रणभूमि में कोई व्यक्ति जीत नहीं सकेगा।" साथ ही अष्टधातु परशा देकर कहा, "इससे तुम युद्ध में विजय प्राप्त करोगे।" उस दिन से आप राम से परशुराम कहलाने लगे।

सहस्रबाहु अर्जुन : अर्जुन अपने युग का बड़ा प्रतापी राजा था। उसने तप द्वारा महर्षि दत्तात्रेय को प्रसन्न करके वरदान प्राप्त किया कि जब वह लड़ने जाये तो उसमें हजार भुजाओं का बल आ जाए। उसने अनेक राजाओं से धन दौलत छीन ली और भोग विलास का जीवन व्यतीत करने लगा। उसके अत्याचारों से जनता बड़ी दु:खी हुई। एक दिन राजा कुछ साथियों और सेना को लेकर शिकार के लिए निकला। राजधानी से बहुत दूर निकल जाने पर रात पड़ी तो राजा अपने साथियों सहित जमदग्नि आश्रम में पहुँचा। महर्षि ने अतिथि जान-

कर राजा की ऐसी आव-भगत की कि सब आश्चर्य में डूब गये। सोने-चाँदी के बर्तनों में ऐसे ऐसे व्यंजन खिलाये जो आज तक राज महल में भी प्राप्त न हुए थे। भोजन के बाद सारे बर्तन अतिथियों को ही भेंट कर दिये गये।

रात भर राजा यही सोचता रहा कि तपस्वी ब्राह्मण के पास इतना धन-दौलत कहाँ से आया। प्रातःकाल पता चला कि उनके पास कामधेनु गाय है जिससे जो माँगो तत्काल मिल जाता है। राजा ने महर्षि से कहा, 'आप यह गाय मुझे दान में दे द।

महर्षि बोले, "ब्राह्मण क्षत्री को दान नहीं दिया करते। वैसे भी गाय मैं किसी को भी देने को तैयार नहीं हूँ।"

राजा को यह सुन कर बड़ा क्रोध आया। उसने सेना को आज्ञा दी कि गाय को बलपूर्वक छीन कर ले चलो। सैनिक आगे बढ़े तो कामधेनु ने एक-एक को कुचल डाला। राजा क्रोध में लाल पीला होकर राजधानी लौट आया और महर्षि को मारने की योजनायें बनाने लगा। एक दिन उसे पता चला कि महर्षि ने समाधि धारण की है और आश्रम के एक कोने में तप कर रहे हैं। राजा इस अबसर को उचित समझ कर वहाँ पहूँचा और समाधि में बैठे महर्षि का सिर काट दिया। जब रेणुका को पता चला तो वह इस क्रूर अत्याचार का बदला लेने के लिये अपने पुत्र परशुराम को पुकारने लगी। परशुराम कहीं पास ही तप कर रहे थे। माँ के रोने की आवाज सुन कर बड़े विचलित हुए और अपना परशा लेकर आश्रम में पहुँचे। उन्होंने प्रतिज्ञा की कि "जब तक सहस्रबाहु जैसे पापियों का नाश न कर लूँगा, आराम से नहीं बैठूँगा।

पिता का दाह-संस्कार करके आप आश्रम से निकले और सहस्रबाहु तथा कई अन्य अत्याचारी राजाओं को चुन-चुन कर मौत के घाट उतारा। हेयहेय वंश को भारत से ही मिटा दिया और इन पापी राजाओं का धन गरीबों में बाँट दिया तथा राज्य का काम नेक राजाओं को सौंप कर आप पुनः तप करने चले गये।

सीता स्वयंबर : - मिथिला के राजा जनक की सुपुत्री सीता का स्वयंवर था। दूर-दूर से अनेक राजे आये थे। अयोध्या के राजकुमार राम और लक्ष्मण भी ऋषि विश्वामित्र के साथ आये हुए थे। शर्त यह थी कि जो व्यक्ति शिवजी के धनुष का चिल्ला चढ़ा लेगा, सीता उसी से ब्याही जाएगी। भगवान राम ने चिल्ला चढ़ाने के लिए धनुष उठाया और उसे इतने जोर से खींचा कि धनुष के दो टुकड़े हो गए। धनुष की टंकार सुन कर भगवान परशुराम झट वहाँ पहुँचे और क्रोध में बोले ? "ऐसा कौन पापी है जिसने मेरे गुरू शिवजी महाराज का धनुष तोड़ डाला है। मैं अभी उसे इस अपराध का दंड दूँगा।"

भगवान परशुराम को क्रुद्ध देखकर राजा जनक और अन्य राजे डर के मारे काँप रहे थे परन्तु लक्ष्मण जी ने आगे बढ़ कर कहा, "महाराज, धनुष बहुत पुराना था। मेरे भाई राम ने खींचा तो टूट गया। आप क्रोध न करें, इसमें किसी का दोष नहीं है।"

यह सुनकर भगवान परशुराम का क्रोध और बढ़ गया। दोनों में तू-तू मैं-मैं होने लगी। यह स्थिति देखकर भगवान राम आगे बढ़े और परशुरामजी के चरण छूते हुए बोले, "महाराज, क्षमा कीजिए। अपराधी मैं हूँ। आप जो दंड देना चाहें मुझे दें।" चरण छूने और क्षमा माँगने से ब्राह्मण का क्रोध जाता रहा। उन्होंने राम को छाती से लगा लिया और कहा, "मैं समझ गया हूँ कि आप विष्णु के अवतार हैं। अब अधर्म का नाश होगा, धर्म की विजय होगी।" इसके बाद आप पुनः कैलाश पर्वत पर जाकर तपस्या करने लगे।

भगवान परशुराम की कुछ विशेषतायें

भगवान परशुराम के जीवन चरित्र का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि उनमें कुछ ऐसी विशेषतायें थीं जो अन्य अवतारों में नहीं पाई जातीं। जैसे आप :—

1. ब्राह्मण थे साधारण नही महर्षि जमदग्नि के योग्य सुपुत्र जिनके आश्रम में कामधेनु गाय थी।
2. बाल ब्रह्मचारी रहे।
3. पिता की आज्ञा का पालन करना परमधर्म समझते थे।
4. महान त्यागी और बड़े दानी थे। इक्कीस बार राज्य जीता और दान दे दिया।
5. महान तपस्वी थे। अपने जीवन का अधिकतर भाग तपस्या में गुजार दिया।
6. युद्ध विद्या में निपुण थे। भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य और कर्ण जैसे शूरवीरों ने इनसे शस्त्र विद्या सीखी थी।
7. अब तक जीवित हैं और तप कर रहे हैं। इन विशेषताओं के कारण आप पूजा योग्य हैं।

भगवान परशुराम की जयंती कैसे मनाई जाये ?

इस वर्ष भगवान परशुराम जयंती 12 मई शुक्रवार को है। अखिल भारतवर्षीय ब्राह्मण महासभा (रजि०) दिल्ली की कार्यकारणी समिति ने 2 अप्रैल की अपनी बैठक में सर्व सम्मिति से निश्चय किया है कि :—

1. इस वर्ष भगवान परशुराम की जयंती बड़े समारौह से मनाई जाए।

2. समस्त ब्राह्मण सभायें तथा विप्र बन्धु अपने अपने क्षेत्र की सनातन धर्म सभाओं और दूसरे हिन्दुओं को प्रेरणा दें कि वे इस उत्सब को सफल बनाने में पूर्ण सहयोग दें।

3. हो सके तो इस जयंती के लिये एक सप्ताह का कार्यक्रम बनाया जाए। 7 मई रविवार को प्रात: यज्ञ-हवन के बाद उद्घाटन किया जाए। बालक-बालिकाओं की खेलों और गायत्री मंत्र, कोई वेद मंत्र तथा भगवान परशुराम के जीवन पर भाषण एवं कविताओं आदि की प्रतियोगिता कराई जाए। प्रथम तथा द्वितीय स्थान पाने वालों को आखिरी दिन पुरस्कार दिए जायें। 8 से 13 मई तक प्रतिदित शाम को दो घटे भगवान के जीवन पर भाषण कराए जायें, कथा हो या कविदरबार का आयोजन हो।

4. 14 मई को सुबह तथा शाम के लिए रोचक कार्यक्रम बनाया जाये जिसमें भजन कविता, भाषण आदि हों। प्रथम तथा द्वितीय स्थान पाने वालों को पुरस्कार दिय जायें तथा प्रस्ताव पास करके राज्य तथा केन्द्रीय सरकार से अनुरोध किया जाय कि इस जयंती के अवसर पर सरकारी छुट्टी की जाये इस प्रस्ताव की प्रति तथा अन्य कार्यवाही महासभा के कार्यलय में भेजी जाये।

दौलतराम गंगाहर, प्रधान मंत्री,
16/7 रमेश नगर, नई दिल्ली-15

भगवान परशुराम के विषय में प्रश्न

विष्णु भगवान के अवतारों में भगवान परशुराम में अनेक विशेषताएँ होते हुए भी वे भगवान राम और भगवान कृष्ण की तरह प्रशंसा के पात्र नहीं बन सके। इसका कारण मैंने कई विद्वानों से जानना चाहा परन्तु उनके उत्तरों से मुझे संतोष नहीं हुआ। अब मैं यही प्रश्न 'वशिष्ठ' के पाठकों के सामने रखता हूँ। मुझे पूर्ण विश्वास है कि बहुत से बन्धु इसका उपयुक्त उत्तर देने की कृपा करेंगे।

कई विद्वानों का उत्तर यह था कि भगवान परशुराम, राम और कृष्ण की तरह सोलह कला सम्पूर्ण नहीं थे। परन्तु उनके महान कार्यों को देखते हुए कहना पड़ता है कि वह सोलह से भी अधिक कलाओं के स्वामी थे। चूंकि वेद-शास्त्र उन्हें सोलह कला वाला नहीं मानते इसलिए मैं भी

यह समझ लेता हूँ कि वह सोलह कला सम्पूर्ण नहीं थे। यदि वह चौदह, बारह या जितनी भी कला वाले थे, उनके अनुसार ही उनकी महिमा के गीत गाये जाते, सनातन धर्म सभायें और सनातन धर्मी हिन्दू उतने ही उत्साह से उनका जन्मोत्सव आदि मनाते, मूर्तियाँ स्थापित, करके पूजा करते, सिर झुकाते ..

मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि भगवान राम को महर्षि बाल्मीकि और तुलसीदास तथा भगवान कृष्ण को महर्षि व्यास जैसे लेखक न मिलते तो उनकी अवस्था भी भगवान परशुराम जैसी होती। यह भी कहा जा सकता है कि राजा होने के कारण उनके गीत गाये गये, आरतियाँ उतारी गई जगह-जगह मन्दिर बना कर उनकी मूर्तियाँ स्थापित कीं जहाँ प्रतिदिन उनकी पूजा होती है। बड़े उत्साह से उनकी जयंतियाँ आदि मनाई जाती हैं परन्तु भगवान परशुराम ब्राह्मण थे, अभय योद्धा थे, तपस्वी और त्यागी थे परन्तु किसी लेखक को उनके विषय में कुछ लिखने की इच्छा नहीं हुई।

यदि हम कलाओं की गिनती का विचार न करते हुए एक महान योद्धा के रूप में भगवान परशुराम के काम को परखें तो बिना संकोच यह कहना पड़ेगा कि इतना बड़ा योद्धा विश्व इतिहास में आज तक नहीं हुआ जिसने अकेले ही अपने समय के अत्याचारी राजाओं को एक बार नहीं, इक्कीस बार नष्ट कर दिया हो और उनके राज्य जीतकर दान कर दिये हों। परन्तु बड़ा खेद है कि हम शिवा जी, महाराणा प्रताप आदि के जन्म दिन तो बड़े गौरव से मनाते हैं और भगवान परशुराम का जन्मोत्सव मनाते हुए संकोच करते हैं।

हम भगवान परशुराम के शिष्यों, भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य, कर्ण आदि की वीरता के गुण गाते नहीं थकते परन्तु भगवान परशुराम का गुणगान करते हुए हिचकते हैं। ये बातें मैंने इसलिए लिखी हैं कि उत्तर भेजने वाले भाई इन सबको ध्यान मैं रखते हुए उत्तर दें और बतायें कि वे कौन से कारण हैं जो भगवान परशुराम का जन्मोत्हव मनाने में भारी रुकावट बने हुए हैं।

"दौलतराम गंगाहर"

"प्रर्थना"

श्री पं० के० सी० दवेशर एम० ए० नई रिल्ली

वह शक्ति हमें दो दयानिधे कर्तव्य मार्ग पर डट जावें।
पर-सेवा, पर-उपकार में हम, जग जीवन सफल बना जावें॥
हम दीन-दुखी, निबलों-विकलों के सेवक बन संताप हरें।
जो हैं अटके, भूले, भटके, उनको तारें हम तर जावें॥ वह०
छल-दम्भ, द्वेष, पाखंड, झूठ, अन्याय से निशि दिन दूर रहें।
जीवन हो शुद्ध सरल अपना, शुचि प्रेम सुधारस बरसावें॥ वह०
निज आन कान मर्यादा का प्रभु ध्यान रहे, अभिमान रहे।
जिस देश-जाति में जन्म लिया बलिदान उसी पर हो जावें॥ वह०

आदर्श-मानवता-रक्षक

भगवान् श्रीपरशुराम

श्री पं०—रुद्रदेव पाण्डेयः

चत्वारः पुरतो वेदाः पृष्ठतः सशरं धनुः ।
इद ब्राह्म मिदं क्षात्रं शापादपि शरादपि ॥

परम पूज्य प्रातः स्मरणीय आचार्य चरण रज की असीम कृपा से आज यह पावन सुअवसर पाया, जिसके बल पर मुझे अल्पज्ञ होने पर भी देवाधिदेव भगवान् श्री परशुराम के जीवन पर कुछ लिखने का साहस हुआ, पाठक वृन्द अबोध की धृष्टता पर क्षमा करेंगे, ऐसी आशा ही नहीं परम पूर्ण विश्वास है।

१.भगवान् के विभिन्न अवसार एवं उनके रहस्य—

पुराण एवं शास्त्रों के अनुसार भगवान् के अवतार एवं उनके कृत्यों के विभिन्न दिव्य कारण हैं। उस अलौकिक लीला बिहारी की इस सुरम्य लीला स्थली पर जब-जब धर्म का ह्रास हुआ एवं अन्यायी विधर्मी नृशंस शासकों द्वारा मानवता विनाशक कृत्य चरम सीमा पर पहुँच गये—उसी समय अनन्त ब्रह्माण्ड नायक ने विभिन्न स्वरूपों में अवतरित होकर इस धराधाम पर धर्म एवं पूर्णमानवता की रक्षा की। परमपूज्य गोस्वामी श्री तुलसीदास जी ने कहा है कि—

जब-जब होइ धरम की हानि।
बाढ़ैं असुर अधम अभिमानी ॥
तब तब प्रभु धरि बिबिध शरीरा।
करहि कृपानिधि सज्जन पीरा ॥

(रा० च मा०) तथा विभिन्न अवतारों की नामावली भी स्पष्ट की गई है। यथा—

"मीन कमठ शूकर नरहरो।
वामन परशुराम वपुधरी ॥ (रा० च० मा०)

उपर्युक्त कृत्यों की पुष्टा करते हुए स्वयं परमातमा भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है कि—

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवाते भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।
परित्राणाय साधूनाँ विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्म संस्थापनार्थाय सम्भवासि युगे युगे ॥
श्री० भ० गी० अ० ४ श्लोक ७-८

इन्हीं परम उद्देश्यों की पूर्ति हेतु भगवान् श्रीपरशुराम का भी अवतार हुआ। भगवान् भार्गव राम के विषय में हमैं ठीक-ठीक विचार करने से ही उनके परम पावन आवश्यक कृत्यों का सम्यक् ज्ञान हो सकेगा। भगवान् मर्यादा-पुरुषोत्तम श्रीराम तथा अनुपम लीला बिहारी भगवान् श्री कृष्ण ने अपने कार्य की पूर्ति के पश्चात् अपने इस पार्थिव शरीर का विसर्जन किया परन्तु भगवान् श्रीपरशुराम की गणना आज भी सप्त चिरंजीवियों में की जाती है।

"अश्वत्थामा वलिर्व्यासो,
हनुमाँश्च विभीषणः।
कृपः परशुरामश्च,
सप्तैते चिरजीविनः ॥

भगवान् श्रीपरशुराम के जन्म के समय आदि के विषय में विभिन्न मत हैं, जिस पर मौलिक अन्वेषण कार्य भी प्रारम्भ कर दिये गए हैं। ऋग्वेद के अनुसार भृगु वंशीय परम्परा अति प्राचीन है। भृगुवंशीय असाधारण प्रतिभाशाली त्याग वृत्ति प्रधान तपस्वी थे। ऐसे संस्कृत एवं तप समृद्ध वंश में ऋषि दिवोदासु, च्यवन एवं और्व विशेष

उल्लेखनीय हैं।

और्व महर्षि के विषय में एक एसी भी कथा कही जाती है कि उन्होंने तपस्या के प्रभाव से जलाधिष्ठाता देवता वरुणजी को प्रसन्न किया तथा वरुण देव की कृपा से इन्हें एक अद्वितीय गुणसम्पन्न पुत्र की प्राप्ति हुई जो पश्चात् में ऋचीक महर्षि के नाम से विख्यात हुए। ऋचीक महर्षि स्वभाव से ही त्यागी एवं उदार थे।

ऋचीक महर्षि ने बहुत समय तक कठोर तपस्या की। इनकी कठिन तपोनिरत अवस्था को देखकर इन्द्रादि, यम ब्रह्मा अतीव प्रसन्न हुए तथा एक दिन गोधूलि की पावन बेला में महर्षि को आकाशवाणी द्वारा उनका शुभ संदेश मिला।

आकाशवाणी इस प्रकार हुई—"हे तपेनिष्ठ महर्षि ! हम देवगण आपकी तपस्या से पूर्ण संतुष्ट होकर आपसे गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने के लिए प्रार्थना करते हैं, इस गृहस्थाश्रम में प्रविष्ठ होकर ही आपकी मन-कामनाएं पूर्ण होंगी।"

सहसा इस गम्भीर गगन गिरा को श्रवण कर महर्षि ऋचीक स्तब्ध रह गये। पुनः विचार किया तो गृहस्थाश्रम में प्रवेश करना ही निश्चित किया। ऋषि की अवस्था अधिक हो चुकी थी, केश विधुल्लता के समान पीतवर्ण हो गये थे, पर मुख मण्डल तप तेज से उद्दीप्त हो रहा था।

महर्षि गृहस्थाश्रमी होने के लिए उसी समय सहगामिनी की खोज करने के लिए निकल पड़े, कुछ दिन के पश्चात् गाधि राजा के राज्य में आ पहुँचे तथा उनकी कुमारी कन्या सत्यवती को कन्यादान स्वरुप में मांगा। प्रथम तो गाधि नरेश ने टाल-मटोल की, परन्तु ऋषि को क्रोधित देखकर विचार किया कि यदि हम इनका अनादर करेंगे तो इसका परिणाम अच्छा न होगा। परिणाम स्वरुप उन्होंने एक नयी सूझ के अनुसार महर्षि से कहा "महाराज हमारी एक प्रतिज्ञा है कि जो एक सहस्र "श्यामकर्ण" अश्व मुझे आज ही देगा हम कन्या का पाणि ग्रहण संस्कार उसी के साथ करेंगे।"

गाधि नरेश की वाणि को श्रवण कर महर्षि स्नानार्थ धेनुमति नदी तट पर चले गये तथा स्नाननादि से निवृत्त होने पर तपोबल से एक सहस्त्र "श्यामकर्ण" घोड़े उत्पन्न किये, एवं उन्हें लेकर अविलम्ब राज्य में उपस्थित हुए। मुनि की इस क्रिया से संतुष्ट होकर गाधि नरेश ने अपनी इकलौती पुत्री सत्यवती कन्या-दान स्वरुप महर्षि को सौंप दी।

गाधि पुत्री सत्यवती ऐसे तपोनिष्ठ पति को प्राप्त करके बहुत प्रसन्न हुई तथा आदर्श गृहस्थाश्रम का पालन करने लगी। इस प्रकार गृहस्थाश्रम का समुचित पालन करते हुये दम्पति ने बहुत समय व्यतीत किया। एक समय पति धर्म परायण सत्यवती ने पति से कहा "महाराज मुझे पुत्र की कामना है, तथा साथ में ही, मेरे पिता के राज्य का संचालन करने के लिए उन्हें भो योग्य पुत्र चाहिये।" पत्नी की मधुरवाणी सुनकर महर्षि आनन्दित हो उठे तथा उन्हें पुत्र प्राप्ति के विषय में ध्रुव आश्वासन प्रदान किया।

महर्षि ऋचीक ने यौगिक क्रिया से दो भिन्न-भिन्न चरू बनाये। अपनी भार्या सत्यवती के लिए उन्होंने ब्रह्म एवं रौद्र तेज को प्रतिष्ठित किया तथा अपनी सास अर्थात् सत्यवती की माँ के लिए क्षात्र एवं वैष्णव तेज को प्रतिष्ठित किया। प्रस्तुत योग क्रिया को देखकर सास के मन में स्वाभाविक ही शंका बलवती हो उठी कि महर्षि ने स्वभार्या के लिए अवश्यमेव ही कोई विशिष्ट पदार्थ बनाया होगा, इस पर सत्यवती ने अपने लिए जो चरू था वह माता के लिए दे दिया तथा माता के लिए निर्मित चरु को स्वयं ग्रहण किया।

चरू का विनिमय रहस्य जब सत्यवती को ज्ञात हुआ तब उन्होंने महर्षि से पूछा महाराज मेरे कोख से ऋषिकुल को सुशोभित करने वाला पुत्र पैदा होना चाहिए। महर्षि ने सत्यवती को सांत्वना प्रदान करते हुए कहा कि सत्यवती तुम्हारी अभिलाषा तो अवश्य पूर्ण होगी परन्तु इस योग निर्मित

चरू का प्रभाव तुम्हारे नाती में अवश्य रहेगा क्योंकि इसका प्रभाव निष्फल नहीं हो सकता। कुछ समयानन्तर दम्पति को हार्दिक अभिलाषा की पूर्ति का समय आया और सत्यवती के गर्भ से महर्षि श्रीजमदग्नि का जन्म हुआ। माता पिता की सात्विकता एवं सद्आचरणों का प्रभाव महर्षि जन्मदग्नि पर विशेष रूप से पड़ा तथा बाल्यावस्था में ही यौगिक साधनों एवं शास्त्रादि के पारंगत हो गये।

महर्षि जमदग्नि ने गृहस्थाश्रम में प्रवेश किया सहचरी के रूप में इक्ष्वाकुवंशीय अद्वितीय सौन्दर्ययुक्त राज कन्या "रेणुका" का पाणि ग्रहण किया, इस प्रकार महर्षि श्रीजमदग्नि एवं रेणुका को ही भगवान् श्रीपरशुराम के लौकिक माता पिता बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

वैसाख मास की शुक्ल पक्ष की तृतीया को कर्कट लग्न में भगवान् श्रीपरशुराम का जन्म हुआ, ऐसे सर्व गुण सम्पन्न पुत्र को देखकर माता रेणुका एवं महर्षि जमदग्नि के हर्ष का पारावार न रहा। महर्षि का आश्रम एक नवीन चेतना से ओत-प्रोत हो गया।

ऋषि कुमारों के साथ अनेक प्रकार की बाल लीला करते हुए इस अद्भुत बालक को देखकर दम्पति सदैव आनन्दित रहते थे तथा इन्हें "राम" नाम से ही पुकारते थे।

पदम पुराण के कथनानुसार जात कर्म एवं उपनयनादि संस्कार सम्पन्न होने के पश्चात् भगवान् श्रीपरशुराम तपस्या हेतु शालिग्राम पर्वत पर चले गये, तथा वहीं पर महर्षि कश्यप ने इन्हें वेदाध्ययन कराया, इस प्रकार भगवान् भृगु नन्दन सम्पूर्ण धनुर्वेद के ज्ञाता हो गये।

माता रेणुका एवं महर्षि जमदग्नि की प्रबल इच्छा थी कि मेरा पुत्र महान पण्डित हो एव शास्त्र विद्याओं में निपुण हो, यद्यपि महर्षि कश्यप ने इन्हें पूर्ण वेदज्ञ एवं शस्त्रज्ञ बनाया था, परन्तु पुनः माता की आज्ञा से भगवान् श्री परशुराम पुनः कैलाश पर्वत पर चले गये और कठिन तपस्या में लीन हो गये। भगवान् आषुतोश प्रसन्न हुए तथा इन्हें पुनः धनुर्वेद की शिक्षा दी। शिष्य की परीक्षा स्वय भगवान् शंकर ने अपने साथ युद्ध में की जिस परीक्षा में श्रीपरशुराम शत प्रतिशत उत्तीर्ण रहे। भगवान् अवढर दानी भोलेनाथ ने इन्हें अपना दिव्य "परशु" भी प्रदान किया उसी समय से इतका नाम परशुराम हुआ ऐसा उल्लेख है।

अब भगवान् परशुराम के व्यापक कर्म क्षेत्र का सर्वांग विवेचन भी परमावश्यक है। भगवान् परशुराम के अलौकिक दिव्य कर्मों में प्रधान विषय है "तत्कालीन विधर्मी उद्दण्ड क्षात्र धर्म रहित क्षत्रियों के विनाश का।" इस विषय पर बहुत सी भ्राँति है। मेरे विचार से यह दोषारोपण कि भगवान् परशुराम ने क्षत्रियों का विनाश किया यह पूर्ण भ्रम मूलक है। हमें भृगु कुल कमल दिवाकर भगवान् परशुराम के जीवन को केवल एकांगी दृष्टि से न देखकर व्यापक दृष्टि से देखना होगा तथा इस विषय में ठीक २ समझना होगा।

ऐतिहासिक एवं पौराणिक दृष्टि से इसके कारण निम्नलिखित हैं—

१—भगवान् श्री परशुराम ने केवल उन्हीं क्षत्रियों का बध किया जो क्षात्रधर्म से रहित होकर अत्याचार करने लगे।

२ सनातन भारतीय संस्कृति के मूलाधार गौ ब्राह्मण एवँ बाला अपहरण ऐसे निन्दनीय कर्म-क्षत्रियों द्वारा होने लगे।

३ विशेष कर हैहय वंशी क्षत्रिय बलात् ब्राह्मणों का धन अपहरण करने लगे तथा उन्हें समूल नष्ट करने को तत्पर हो गये।

४—तत्कालीन ऐसे निन्दनीय एवं गर्हित कृत्यों को रोकने की शक्ति किसी में न रही। इस कारण ब्राह्मण होते हुए भी धर्म रक्षार्थ भगवान् श्री परशु-

राम को शस्त्र धारण करना पड़ा।

उपरोक्त कारण प्रधान रहते हुए भी एक दिन सहसा एक आकस्मिक घटना महर्षि श्री जमदग्नि के आश्रम में घटी, ऐसे समय में भगवान् परशुराम आश्रम पर उपस्थिति नहीं थे। घटना इस प्रकार हुई—

तत्कालीन उग्रशासक सहस्त्रार्जुन जो कि महर्षि जमदग्नि से स्वाभाविक ही बैर रखता था, अकस्मात् महर्षि के आश्रम पर आया, महर्षि ने आश्रम पर आये हुए अतिथियों के सत्कार के लिए अनेक ऐश्वर्ययुक्त प्रबन्ध भी किये। ऐसे ऐश्वर्य को एक ऋषि आश्रम में देखकर सहस्त्रार्जुन क्षुब्ध हो गया तथा महर्षि से इसके विषय में पूछा। सहज ही उदार निष्कपट स्वभाव से जमदग्नि जी ने कहा "राजन्! यह सब ऐश्वर्य इस कामधेनु का प्रसाद है।"

सहस्त्रार्जुन ने हठपूर्वक आश्रम की शान्ति भंग कर दी एवं मुनि की कामधेनु को लेकर अपनी राजधानी को चला गया।

भगवान् श्री परशुराम जब लौट कर आये तब आश्रम की हीन दशा देखकर माता से पूछा, माता रेणुका ने सब वृतांत सुना दिया। भगान् भार्गव राम बिना किसी सहायक को साथ लिए माहिष्मती की तरफ चल दिये, परिणाम स्वरूप सहस्त्रार्जुन का वध करके कामधेनु को पुनः आश्रम पर ले आए। यह है भगवान् परशुराम का असीम धैर्य एवं अतुल पराक्रम।

सहस्त्रार्जुन के वध से हैहयवंशी क्षत्रियों में बहुत क्षोभ हुआ और इन क्षत्रियों ने कार्तवीर्यार्जुन के पुत्रों को भड़काना प्रारम्भ किया, जिसके बल पर, भगवान् परशुराम की अनुपस्थिति में सहस्त्रार्जुन के उद्दण्ड पुत्रों ने ध्यानावस्थिति जमदग्नि ऋषि का सिर धड़ से अलग कर दिया।

महर्षि जमदग्नि की नृशंस हत्या से माता रेणुका शोकाकुल हो विलाप करने लगी। भगवान् परशुराम जब आश्रम पर आये और माता की ऐसी दुर्गति देखी तभी क्रोधाग्नि प्रज्ज्वलित हो गई, बस उसी क्षण अतीव मातृभक्त परशुराम ने अन्यायी उद्दण्ड क्षत्रियों के विनाश की घोर प्रतिज्ञा कर ली।

इस प्रकार इक्कीस बार क्षत्रियों के विनाश की उक्ति पर व्यापक दृष्टि से विचार करना चाहिये क्योंकि यदि एक बार ही यह वसुन्धरा क्षत्रियों से रहित हो गई होती तो दुबारा क्षत्रियवश के विनाश का प्रश्न ही समाप्त हो जाता हैं।

पुनश्च भगवान् श्री परशुराम के पूर्वजों के समय से ही इस पृथ्वीमण्डल पर इक्ष्वाकु वंशीय राजाओं का राज्य था तथा इसके प्रमाणस्वरूप "इक्ष्वाकुणामियं भूमि," महर्षि बाल्मीकि ने वर्णन भी किया है, यदि भगवान् श्री परशुराम क्षत्रिय मात्र के द्रोही एवं घातक होते तो रघुकुल का रहना कैसे सम्भव हो सकता था। इसका कारण यही था कि रघुवंशी सदा स्वाभाविक क्षात्र धर्म का पूर्णरूपेण पालन करते थे। ऐसे धर्मानुरागी क्षत्रिय वंश पर श्रीपरशुराम ने कभी भी क्रोध नहीं किया।

हाँ, रामचरित मानस में सीता स्वयंबर में शिव धनुष भंग होने के पश्चात् लक्ष्मण और परशुराम जी का संवाद वर्णित है जिसके आधार पर यह कहा जाता है कि परशुराम जी ने लक्ष्मण को मारने के लिए कहा था, परन्तु इसी के साथ हमें उस प्रसंग पर भी ध्यान देना आवश्यक है जब कि विश्वामित्र जी ने श्रीराम एवं लक्ष्मण के द्वारा कुल पितृनाम युक्त प्रणाम भी करवाया था और परम उदार भगवान् परशुराम ने श्री राम व लक्ष्मण के लिये अमोघ आशीर्वाद भी दिया था।

"अभय होउ अरि ते सदा, समर न जीतै कोय।
चिरंजीव युग युग जियहु कीर्ति लताबग होय॥"
(रा० च० मा० वा० का०)

यह है भगवान् श्री परशुराम की उदारता एवं धर्मात्मा क्षत्रिय राजाओं के सुपुत्रों के लिए अमोघ

आशीर्वाद, यदि हृदय से सब क्षत्रियों के द्रोही होते तो भगवान् श्रीराम और लक्ष्मरण को अमोघ आशीर्वाद क्यों देते । इतना ही नहीं अपना विशाल धनूष भी भगवान् श्री राम के लिये समर्पित कर दिये और करना भी आवश्यक था क्योंकि जिस उद्देश्य की पूर्ति के लिए ब्राह्मण ने शस्त्र उठाया था उसकी पूर्ति के योग्य क्षत्रिय श्री राम स्वरूप में अवतरित हो चुके थे ।

दूसरा मार्मिक प्रसंग भगवान् परशुराम के विषय में मात हत्या का है, इस विषय पर भी लोग नाना प्रकार से इस अलौकिक विग्रह पर दोषारोपण करते हैं । इसका 'समाधान' भी विचारपूर्वक ही होना चाहिए । पिता की अविलम्ब आज्ञा पालन करते हुए माता के कलंक का प्रक्षालन ही इस कृत्य का महान् उद्देश्य था ।

पिता की इच्छानुसार जब श्री परशुराम जी ने मातृवध किया तब महर्षि जमदग्नि बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने परशुराम को अमोघ आशीर्वाद भी दिया । यथा -

"स्वच्छन्द मरणं पुत्र तुष्टे त्वं मयि लप्स्पसे"

विद्वानों के मतानुसार श्री परशुराम का चिरंजीवि होना पिता के आशर्वाद का ही परिणाम था । पुनः श्री परशुराम जी ने यह वरदान भी माँगा कि माता जीवित हो जायँ तथा इस कृत्य की स्मृति माता को व मुझे कभी न हो, यह प्रसंग भगवान् श्री परशुराम की अपूर्व मातृ भक्ति का पूर्ण परिचायक है ।

सूक्ष्म रूप से यदि विचार किया जाय तो यही निश्चित होता है यदि श्री परशुराम पिता की आज्ञा न मानकर मातृवध न करते तो भी रेणुका ऋषि की क्रोधाग्नि से अवश्यमेव शापयुक्त होतीं और यह दुःख उन्हें जन्म-जन्मान्तर भुगतना पड़ता । इन बातों पर गम्भीर विचार करने से ही भगवान् परशुराम ने पिता की आज्ञा पालन करने के साथ-साथ माता को जन्म जन्मान्तर में होने वाले त्रितापों से मुक्त किया, यह भगवान भृगुनन्दन के मातृवध का रहस्य है । जिससे मानव मात्र को मौलिक प्रेरणा लेनी चाहिये ।

इतना होने पर भी श्री परशुराम जी को हार्दिक संतोष न हुआ और वे पुनः इसका प्रायश्चित्त करने के लिए आर्यावर्त्त के सम्पूर्ण तीर्थ स्थानों की पद परिक्रमा के लिए निकल पड़े । अटक से कटक तक एवं ध्रुव उत्तर से ध्रुव दक्षिण तक उन्होंने अनेक तीर्थ स्थानों की स्थापना की जो अखण्ड आर्यावर्त की एकता के द्योतक हैं । आज भी भौगोलिक स्थिति के अनुसार नेफा स्थिति "लोहितकुण्ड" जिसे भृगु कुण्ड या परशुराम कुण्ड कहते हैं । यह वही पावन कुण्ड है जहाँ भगवान् श्री परशुराम ने अपना "परशु" प्रक्षालन किया था तथा इसी कुण्ड के जल से अश्वमेध यज्ञ का संकल्प किया था ।

आज हम भारतीयों का दुर्भाग्य है कि हम भगवान् श्रीपरशुराम को ही भूल बैठे हैं । और यही कारण है कि यह पावन तीर्थ स्थल जो हमारी एकता का एक मात्र प्रतीक हैं आज विधर्मी आततायियों से घिरा हुआ है । भगवान् श्री परशुराम ने जिस धनुर्वेद की शिक्षा भगवान् शंकर से ली, उसे अपने तक ही सीमित न रख कर उसे महाभारत कालीन योद्धा महारथी कर्ण, आचार्य द्रोण एवं भीष्म पितामह को भी प्रदान की । यहीं तक नहीं भगवान् श्री कृष्ण एवं बलराम ने भी भगवान् श्री परशुराम से ही दुर्गयुद्ध प्रणाली की शिक्षा प्राप्त करके जरासन्ध से विजय प्राप्त की, यह भृगुनन्दन की उदारता का अकाट्य प्रमाण है । भगवान् श्री परशुराम जैसे अतीव शक्तिशाली एवं उदार थे वैसे ही दानवीर शिरोमणि भी थे । सम्पूर्ण पृथ्वी पर अधिकार रखते हुए भी इन्होंने यज्ञान्त स्नान के पश्चात् सम्पूर्ण पृथ्वी महर्षि कश्यप को दान में दे दी थी । यथा

दुर्नीत पार्थिव कदम्ब निकृत्त शीर्ष
ग्राव द्रवद्रुधिर सिद्ध धुनी जलौधै।
आकण्ठतो निज पितृन्यरितर्प्य पश्चात
प्रादा धराँ वसुमतीं किल कश्यपाय ।।
(श्री परशुराम स्तो०)

महर्षि कश्यप की आज्ञानुसार उन्होंने दान दी हुई पृथ्वी पर अपना आश्रम भी न रखा। वे पुनः तपस्या के लिये सहयाद्रि पर्वत पर चले गये और वहाँ पर वह सारा भूमि-खण्ड वरुण देव से वापस लिया जो आज **'सप्त कोंकण'** के नाम से विख्यात है और इसमें वर्तमान गोआ, केरल आदि विद्यमान हैं जहाँ आज भी भगवान् श्री परशुराम द्वारा स्थापित अनेक शिव मन्दिर हैं। भगवान् श्री परशुराम से संबन्धित अनेक स्थान आज भी वर्तमान हैं जो भारतीय संस्कृति एवं एकता के प्रतीक है। महाराष्ट्र में कई परशुराम मन्दिर भी है जहाँ दैनिक पूजा के साथ लोग उनके स्तोत्र का गान करते हैं।

इस प्रकार अनेकानेक प्रमाण प्राप्त होते हैं। आज की विषम परिस्थिति में हमें भगवान् परशुराम को अपने अन्तः स्थल में जाग्रत करना होगा, भावी राष्ट्र नायकों को भी भगवान् परशुराम के जीवन से चेतना लेनी होगी तभी हम राष्ट्र धर्म की रक्षा कर सकते हैं।

भगवान् श्री परशुराम से हमें उसी प्रकार चेतना व आत्मिक बल लेना चाहिये जैसे कि राष्ट्रनायक क्षत्रपति शिवाजी ने ली एवं राष्ट्र धर्म की स्थापना के साथ २ मातृभूमि की रक्षा की थी।

उपसंहार की दृष्टि से हम उस परम मंगलमय विग्रह से पुनः अनन्य चित होकर प्रार्थना करते हैं कि हम भारतवासियों के हृदय में वह प्ररणा जाग्रत हो जिसके बल से हम अपने सनातन गौरव एवं संस्कृति की रक्षा के लिए अदम्य उत्साह से अग्रसर होते रहें।

पुनः पुनः भगवान् भृगुकुल नन्दन के चरण कमल में कोटिशः प्रणाम करते हुये अपनी त्रुटियों के लिये क्षमा चाहते हैं।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुखभाग्भवेत्।

भगवान् श्री परशुराम की जय

एक बार फिर जाग ब्राह्मण !

श्री पं० प्रद्युम्न कान्त, ए, १७४, मोती बाग,

एक बार फिर जाग, ब्राह्मण।
एक बार फिर जाग ।।

१

कहाँ गया वह तेज पुंज,
थर्राता जिससे था संसार।
कहाँ गया वह दिव्य ज्ञान,
जागृत करदे एक बार ।।
एक बार फिर जाग, ब्राह्मण।
एक बार फिर जाग ।।

२

करो याद गौतम वशिष्ठ की,
परशुराम की शक्ति को।
विद्या तप के जाति-तन्त्र को,
झंकृत कर दो एक बार।
एक बार फिर जाग, ब्राह्मण।
एक बार फिर जाग ।।

३

खोआ हुआ अस्तित्व जगा कर,
भारत को तू सभ्य बना दे।
गंगा यमुना और सिन्धु को,
पूरित कर दे एक बार।
एक बार फिर जाग, ब्राह्मण।
एक बार फिर जाग ।।

कार्यालय

अखिल भारतवर्षीय ब्राह्मण महासभा (रजि०) दिल्ली

१०४ ए, कमला नगर, दिल्ली-7

परिपत्र नं० ५,

तिथि २८-४-६७.

प्रिय बन्धु,

आप यह जानकर प्रसन्न होंगे कि महासभा का काम दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। इसकी कार्यकारिणी समिति ने निश्चय किया है कि इस वर्ष योग्य वर-कन्याओं तथा बेकार ब्राह्मण नर-नारियों की सूची तैयार की जाये। योग्य छात्र छात्राओं को छात्र वृत्तियाँ तथा अन्य सहायता दी जाये। असहाय विप्र बन्धुओं की सहायता की जाये और ब्राह्मण भवन के लिये भूमि खरीदी जाये।

इन कामों में सफलता प्राप्त करने के लिये आपके पूर्ण सहयोग की आवश्यकता है। कृपा करके आप इस पत्र के पहुँचने पर एक सप्ताह के भीतर इस प्रकार की जानकारी देकर कृतार्थ करें।

अपने तथा अपने सम्बन्धियों के :-

(i) विवाह योग्य लड़के-लड़कियों के नाम, आयु, शिक्षा, कद, रंग, जात, नानकी जात, गोत्र, .. आदि आवश्यक बातें।

(ii) बेकार नर-नारियों के नाम, आयु, योग्यता, अनुभव, वह क्या काम करना या सीखना चाहते हैं।

(iii) ऐसे विप्र बन्धुओं के नाम व पूरे पते जो काम दे या दिला सकते हैं अथवा सिखला सकते हैं।

(iv) आप या आपके सम्बन्धी भवन कोष में मासिक अथवा वार्षिक क्या दिया करेंगे।

(v) आप तथा आपके सम्बन्धी सहायता कोष में मासिक या वार्षिक क्या सहायता देंगे।

(छोटी से छोटी राशि भी धन्यवाद सहित स्वीकार की जायेगी)

याद रखें कि बूंद-बूंद पानी मिलकर नदी का रूप धारण कर लेता है।

आपकी जानकारी के लिये उन सज्जनों के नाम दिये जाते हैं जिन्होंने इस पुण्य कार्य के लिय सहयोग दिया है।

(i) श्री पं० ओंकार नाथ शर्मा, एम० सी० इंजीनियरिंग कं०, 38, ओखला—25 रु० मासिक

(ii) श्री पं० किशोर चन्द भारद्वाज – Z-1 रजौरी गार्डन,— 10 रु० मासिक

(iii) श्री पं० सोमनाथ तेजपाल, १०४ ए, कमला नगर—10 रु० मासिक

(iv) श्री डा० देशराज कौशिक, w z 15, राजा गार्डन— 5 रु० मासिक

(v) ,, पं० एस० डी० देव, B 135 नेता जी नगर—5 रु० मासिक

(vi) ,, ,, शिवचरणदास शर्मा, 15/1 तिलक नगर –11 रु० वार्षिक

(vii) ,, ,, देवीलाल शर्मा, H 21, जंग पुरा 11 रु० ,,

(viii) ,, ,, अमर चन्द तेजपाल, 6/3 प्रेमजसराय बिल्डिंग पहाड़ गंज - 11 रु० वार्षिक

(ix) ,, ,, बालकराम प्रभाकर, W Z 6, रामनगर,—11 रु० वार्षिक

(x) ,, ,, जसवंतराय शर्मा, 52/4 अशोक नगर – 10 रु० ,

(xi) ,, डा० रामस्वरूप शर्मा, 5219, कोल्हापुर रोड, जवाहर नगर—5 रु० वार्षिक

(xii) ,, ,, ईश्वरदास महे, शाप नं० 17, तिलक नगर,—5 रु० वार्षिक

(xiii) ,, ,, नारायण प्रकाश बख्शी, अर्जुन नगर,— 5 ,, ,,

(xiv) ,, ,, अयोध्या प्रसाद मिश्रा, तिलक नगर— 5 ,, ,,

(xv) ,, ,, अयोध्या नाथ गोस्वामी, ,, ,,— 5 ,, ,,

निवेदक :—

सोमनाथ तेजपाल
प्रधान

दौलतराम गंगाहर,
प्रधान मंत्री

भगवान परशुराम

श्री पं० आर० एस० मिश्रा, बी० ए० साहित्य शास्त्री प्रचार मंत्री अ० भा० ब्र० महासभा दिल्ली

जब हम प्राग् ऐतिहासिक काल अथवा पौराणिक युग के किसी इतिहास का वर्णन लिखने बैठते हैं, तो हमें उन अपने पुराणों का सहारा लेना पड़ता है: जिनमें पुरातन इतिहास भरा पड़ा है। परन्तु हम पुराणों को केवल विशुद्ध इतिहास नहीं कह सकते क्योंकि वे उच्चकोटि के साहित्यिक तथा सांस्कृतिक ग्रंथ हैं और वे ईश्वरीय चमत्कारों की छटा से चमत्कृत हैं।

डाक्टर जानसन का कथन है कि "किसी का जीवन चरित्र वही व्यक्ति लिख सकता है जो उसके साथ एक दिल होकर रहा हो अर्थात् जिसकी जिज्ञासा उसके जीवन चरित्र के अध्ययत में पूर्णरूप से खोज पूर्ण हो।" ऐसी स्थिति में आज से तेरह हजार वर्ष पुरानी भगवान् परशुराम की गाथा का सत्य विवेचन करना निश्चय ही असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है।

सृष्टि के आदि से अब तक भारत भूमि पर चार महायुद्ध हुए हैं, जिनके नाम इस प्रकार हैं:—

प्रथम महायुद्ध—देवासुर संग्राम। यह महायुद्ध आर्य तथा अनार्यों के बीच हुआ था। इसमें आर्यों की विजय हुई और उन्होंने अपनी संस्कृति तथा धर्म को सम्पूर्ण संसार में व्याप्त किया।

दूसरा महायुद्ध—परशुराम सहस्रबाहु युद्ध यह युद्ध उस समय के प्रतापी महाराज सहस्रबाहु अर्जुन तथा भगवान् परशुराम के मध्य हुआ और इसी युद्ध में विजय प्राप्त करने पर परशुराम-भगवान कहलाए। इस तेजस्वी ब्राह्मण ने देश में ऐसी उथल पुथल मचाई, जैसी भगवान कृष्ण जी महाराज ने भारत में पाँच हजार वर्ष पहले मचाई थी। भगवान परशुराम ने अपने समय के अद्वितीय कर्मवीर तथा तेजस्वी तेज के रूप में अत्याचारी क्षत्रिय शासकों को दबोच कर विद्वान ब्राह्मण ऋषियों को भारत का राज्य देकर अपना कार्य पूरा किया।

तीसरा महायुद्ध—राम-रावण युद्ध। यह युद्ध राम तथा रावण के बीच हुआ। इस युद्ध का वर्णन रामायण में बड़े विस्तार से आता है।

चौथा महायुद्ध—कौरव-पाण्डव युद्ध। ये चारों युद्ध पुराणों में महाभारत के नाम से प्रसिद्ध हैं। परन्तु आजकल केवल चौथे युद्ध को ही लोग महाभारत के नाम से याद करते हैं "(भगवान्-श्रीकृष्ण जी की अध्यक्षता में इस चौथे महायुद्ध में भारत नष्ट प्रायः हो गया था।

अब हम अपने आराध्यदेव तथा प्रागऐतिहासिक युग के उस अग्रणी लोकनायक की ओर झुकते हैं, जिन्हें पौराणिक इतिहास, द्वितीय महायुद्ध—"परशुराम-सहस्रबाहु संग्रामिक काल का शिरौमणि कहकर देवत्व के सिंहासन पर प्रतिष्ठित करता है।

महर्षि विश्वामित्र के पिता गाधिराज के एक कन्या थी। इसका विवाह विश्वामित्र जी ने अपने पिता पर जोर डाल कर महर्षि ऋचीक के साथ कराया था। समय पर विश्वामित्र की बहन अर्थात् महर्षि ऋचीक की पत्नी के एक पुत्र रत्न हुआ। बाद में यह ऋषि-पुत्र संसार में जमदग्नि ऋषि के नाम से विख्यात हुआ। बड़े होने पर जमदग्नि ने महाराज प्रसेनजित रेणु की बड़ी लड़की रेणुका से विवाह किया और उन्हीं के गर्भ से भगवान परशु-

राम का जन्म हुआ। माता क्षत्राणी थी और दादी भी क्षत्राणी। अतः भगवान परशुराम जी में ब्राह्मणत्व के साथ-साथ वीरोचित गुणों का होना स्वाभाविक ही था।

महाराज प्रसेनजित रेणु की दूसरी कन्या सुकृति का विवाह महाराज सहस्त्रबाहु अर्जुन के साथ हुआ था। इस भाँति महर्षि जमदग्नि यानी परशुराम जी के पिता और महाराज सहस्त्रबाहु अर्जुन सगे साढू थे। यद्यपि जमदग्नि ब्राह्मण-पुत्र थे, किन्तु इनकी माता सत्यवती – महाराज गाधि की पुत्री तथा महर्षि विश्वामित्र की बहन थी और पत्नी रेणुका थी। सत्यवती व रेणुका दोनों ही क्षत्रिय कन्याएँ थीं। फलतः जमदग्नि-पुत्र परशुराम जी में क्षत्रियोचित गुणों की भी प्रधानता थी। बड़े होने पर परशुराम का यश देश-देशान्तरों में फैला और वह तेजस्वी ब्राह्मण और लोकनायक के रूप में विख्यात हुए।

इतिहासकारों का मत है कि "परशुराम व सहस्त्रबाहु संग्राम की पृष्ठभूमि में यह भावना उस समय घर कर गई थी कि अत्याचारी नृशंस क्षत्रिय राजाओं के राज्य से छुटकारा पाने के लिए किसे चुना जाय क्योंकि सूर्यवंशी तथा चन्द्रवशी क्षत्रिय राजा आपस में लड़ते थे; जिससे प्रजा का विनाश होता था और प्रजा को अपने अधिकार नहीं मिलते थे।

अतः क्षत्रियेत्तर जातियों के वीर पुरुष भी राज्याकांक्षी थे। देवयोग से उन्हें भगवान परशुराम का नेतृत्व मिल गया और राजद्रोह खुल कर खेलने लगा।

जिस समय की यह बात है, नर्मदा व ताप्ती नदियों के आसपास सहस्त्रबाहु अर्जुन राज्य करते थे। यह बड़े पराक्रमी और तपस्वी थे। तप के बल से सहस्त्रबाहु ने महर्षि दत्तात्रेय जी को प्रसन्न करके उनसे ऐसे अस्त्र-शस्त्र प्राप्त कर लिये थे, जिससे वह युद्ध में किसी से भी न हार सकें।

इधर भगवान परशुराम ने बमभोला भगवान शंकर जी से शस्त्र विद्या सीखी। और वह तेजस्वी ब्राह्मण होने के साथ साथ अस्त्र-शस्त्र की विद्या में भी पूर्ण निष्णात हो गए।

इस प्रकार महाराज सहस्त्रबाहु व भगवान परशुराम अपने समय के दो वीर थे। सहस्त्रबाहु राजा थे और परशुराम जी वीर व तेजस्वी ब्राह्मण। सहस्त्रबाहु एक शक्तिशाली शासक भी थे। वह एक बार अपने परिवार सहित नर्मदा नदी के जल में जलक्रीड़ा कर रहे थे। कुछ जल की रुकावट के कारण नदी का प्रवाह उल्टा बहने लगा। ऊपर की ओर लंकाधिपति रावण शिवपूजन में तल्लीन थे। उल्टे प्रवाह के कारण रावण का शिविर बह गया। तब वीरता के अभिमानी रावण ने क्रोध करके महारज सहस्त्रबाहु पर चढ़ाई कर दी। खूब घोर युद्ध हुआ। अन्त में सहस्त्रबाहु ने रावण को बन्दी बना लिया। और फिर रावण के पितामह महर्षि पुलस्त के अनुरोध पर उसे बंधन मुक्त कर दिया।

एक दिन सहस्त्रबाहु अर्जुन शिकार खेलते खेलते महर्षि जमदग्नि के आश्रम पर पहुँचे। दोनों में बड़ा प्रेम भाव था क्योंकि एक सम्राट् और दूसरा ऋषि। एक राजर्षि तो दूसरा ब्राह्मर्षि और आश्रम वासी। जिस पर दोनों में साढू का सम्बन्ध भी, क्योंकि दोनों की पत्नी रेणुका व सुकृति सगी बहनें थीं। ऋषि ने सहस्त्रबाहु के पूरे दल का बड़ा शानदार स्वागत व सत्कार किया। महर्षि जमदग्नि के पास कामधेनु थी। इसकी यह विशेषता थी जो भी वस्तु इससे माँगी जाती, वह तुरन्त उपलब्ध होती थी।

महाराज सहस्त्रबाहु अर्जुन को यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि ऋषि जमदग्नि एक साधारण तपस्वी ब्राह्मण है। लेकिन स्वागत सत्कार के लिए जैसी-जैसी चीजें उनके आश्रम में उपलब्ध हैं, वैसी वस्तुएँ हम जैसे सम्राट् के पास भी नहीं हैं। अन्त में सहस्त्रबाहु से न रहा गया और उन्होंने

इसके बारे में ऋषि से पूछ ही लिया। ऋषि ने बतलाया, यह सब कामधेनु का प्रताप है। वरना मुझ तपस्वी के पास कहाँ क्या था। यह सुनकर सहस्रबाहु उस गाय के लिए ललचा गए और अपने सेनिकों को उन्होंने उसे छीनकर ले जाने का आदेश जारी कर दिया। ऋषि भला राजा की सेना का क्या मुकाबला करते। वह बेचारे देखते रह गए और सहस्रबाहु गाय के साथ अपनी राजधानी को चले गए।

महर्षि जमदग्नि के वसुमान आदि आठ पुत्र थे; जिनमें परशुराम जी सबसे छोटे थे। परन्तु वह अपनी तीव्र बुद्धि, साधना तथा वीरता के बल पर ख्याति प्राप्त कर चुके थे। इस समय देश में दो वर्ग बन चुके थे। ब्राह्मण वर्गका नेतृत्व परशुराम जी के हाथ में था और क्षत्रिय वर्ग का सहस्रबाहु के हाथ में। जब परशुराम जी को यह पता चला कि मेरे पिता के आश्रम से सहस्रबाहु ने जबरदस्ती कामधेनु को लिया है, तो उनके क्रोध का ठिकाना न रहा। वह अस्त्र-शस्त्र से लैस होकर सहस्रबाहु की राजधानी की ओर चल पड़े।

परशुराम जी के साथ अन्य वीर ब्राह्मण कुमार भी थे, जो ऋषियों के आश्रम में उस समय तपस्या व साधना के अतिक्ति शस्त्र विद्या में भी दक्ष थे। परशुराम जी के अन्य भाई भी साथ थे, जो अपने पिता का बदला लेने के लिए सहस्रबाहु की सेना से भूझ पड़े। परशुराम जी सेनाधिनायक थे। उन्होंने सहस्रबाहु को राजधानी में प्रवेश करने से पहले ही मार्ग में धेर लिया। फिर क्या था परशुराम जी उसकी सेना पर टूट पड़े।

युद्ध शुरु हुआ। सहस्रबाहु ने अपनी सेना को आदेश दिया कि परशुराम को जिन्दा पकड़ो। बराबर मार काट होती रही। परशुराम के दल ने बड़ी आसानी से सहस्रबाहु के सेनिकों को काट दिया और ब्राह्मण दल का बाल भी बाँका न हुआ। सहस्रबाहु को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने अधिक सेना बुलाई और परशुराम जी के साथ घमासान युद्ध छिड़ गया। परशुराम जी वार पर वार करते जा रहे थे और सहस्रबाहु दल को बराबर मार रहे थे क्योंकि उन्हें सहस्रबाहु से अपने पिता जमदग्नि की कामधेनु वापिस लेनी थी। इसका निबटारा सहस्रबाहु के जिन्दा रहते कठिन था। इसलिए परशुराम जी ने अपने दल को सहस्रबाहु को घेरने के लिए आदेश दिया।

इस प्रकार युद्ध बढ़ गया। जब सब योद्धा परास्त होकर परशुराम जी के कोप भाजन हो उनके परसे के शिकार हो गये, तब सहस्रबाहु से परशुराम का अन्तिम संग्राम हुआ। दोनों ही महाबली थे। खूब दाँव-पेच हुए। दोनों ही अडिग होकर युद्ध भूमि में डटे रहे और अपने अपने अस्त्र शस्त्रों की करामात दिखाते रहे। दोनों ही एक दूसरे पर घातक प्रहार कर रहे थे परन्तु कोई भी हार का नाम न लेता था। घंटों गुत्थम गुत्था के बाद अचानक भगवान परशुराम का परसा सहस्रबाहु की गर्दन पर पड़ा, जो बड़ा घातक तथा प्राणान्तक सिद्ध हुआ और सहस्रबाहु के प्राण पखेरू उड़ गए।

इस युद्ध में सहस्रबाहु के दस हजार सेनिक मारे गए। कामधेनु परशुराम जी के दल के हाथ लगी। क्रमशः

मौजूदा राष्ट्रपति सर्वपल्ली राधाकृष्णन

श्रीमती मंजु, बी० ए० ए १७४, मोतीबाग, नई दिल्ली-३

भारत के स्वतन्त्र होने पर प्रथम राष्ट्रपति स्वर्गीय डा० राजेन्द्र प्रसाद ने भूमण्डलीय परिस्थितियों पर विजय पाई थी। वह सफल राजनीतिज्ञ तथा सफल सेनानी थे। परन्तु मेरा तात्पर्य भारतीय दर्शन एवं संस्कृति का प्रसार करने वाले मौजूदा राष्ट्रपति सर्वपल्ली राधाकृष्णन् से है।

श्री राधाकृष्णन एक स्वतन्त्र विचारक व्यक्ति हैं। आपकी रुचि अध्ययन शील है। आपका व्यक्तित्व इतना आकर्षक है कि आप अपनी दार्शनिक विचार धारा से महान से महान व्यक्तित्व को बरबस अपनी ओर खींच लेते हैं।

इनका जन्म ५ सितम्बर, १८८८ ईसवी को एक ब्राह्मण परिवार में मद्रास के चित्तूर जिले में हुआ था। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा ईसाई-मिशनरी स्कूल में हुई थी। जब कोई भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता पर आक्षेप करता, तो उनके दिमाग में उसकी प्रतिक्रिया होती और यही कारण है कि उनके विचारों में दृढ़ता एवं स्थिरता बचपन से ही आती गई और उनकी रुचि भारतीय संस्कृति के गम्भीर अध्ययन की ओर बढ़ती गयी।

जब श्री राधाकृष्णन १० वर्ष के थे, उस समय स्वामी विवेकानन्द की विचार धारा का उन पर बड़ा प्रभाव पड़ा क्योंकि ईसाई धर्म प्रचारक भारत की अशिक्षित जनता को बहका कर पथ भ्रष्ट कर रहे थे। आज कल संसार में हमारे राष्ट्रपति डा० राधाकृणन भारतीय संस्कृति, दर्शन तथा अध्यात्मिक विचारों के सर्वश्रेष्ठ आचार्य हैं। वे सादगी तथा विनम्रता की प्रतिमूर्ति हैं।

आपने मद्रास क्रिश्चियन कालेज से एम० ए० की परीक्षा पास की और फिर आप मद्रास प्रेसिडेन्सी कालेज में दर्शन शास्त्र के प्रोफेसर मुकर्रर किए गए। जून, १९६२ में राधाकृष्ण जब इंग्लैंड गए, तो इनके आध्यात्मिक भाषणों से इनकी अन्तराष्ट्रीय प्रसिद्धि बढ़ गई क्योंकि वहाँ ये भारतीय प्रतिनिधि के रूप में गये थे। इसके बाद आप अमरीका गये। वहाँ से लौटने पर इंग्लैंड में आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में दर्शन के प्राध्यापक नियुक्त हुए। फिर काशी विश्वविद्यालय में उपकुलपति रहे। इस प्रकार अपनी तीव्र बुद्धि के कारण दर्शन जैसे गहन विषय को इन्होंने सरल बना दिया। आपका किताबी ज्ञान इतना अधिक था। कि लोग इन्हें "वाकिंग एन साइक्लोपीडिया" अर्थात् चलता फिरता विश्वकोष कहा करते थे। आपने भारतीय दर्शन पर बहुत सी पुस्तकें लिखी हैं। आपकी पुस्तकों का यूरोप तथा अन्य देशों में बड़ा प्रचार है। अब उनके हिन्दी अनुवाद किए जा रहे हैं, जिससे जन साधारण तक उनकी पहुँच हो सके।

श्री राधाकृष्णन् की विचार धारा दार्शनिक होने के साथ नवीन एवं मौलिक है। मार्च, १९४७ में जब दिल्ली में एशिया के देशों का सम्मेलन हुआ तो उसमें आपने एशिया के विभिन्न देशों के प्रतिनिधियों से विचार परामर्श करके उन्हें बताया कि भौतिक वाद में विश्वास रखने से विश्व-शान्ति नहीं हो सकती। विश्वशान्ति का एक मात्र पथ सत्य, अहिंसा एवं अध्यात्मवादी विचार ही हो सकते हैं।

यद्यपि प्रारम्भ में श्री राधाकृष्ण को राजनैतिक कार्यों में अधिक रुचि नहीं थी, परन्तु देश सेवा से उनका हृदय ओत प्रोत था। इसीलिए उन्होंने १९४७ में विधान सभा की सदस्यता स्वीकार कर ली और एक सच्चे देशभक्त के रूप में अपने कर्तव्य का पालन किया। बाद में इन्हें इंगलैंड में भारत का राजदूत नियुक्त किया गया। तत्पश्चात् रूस में भारत का राजदूत बना कर भेजा गया। स्वतन्त्र गणतन्त्र में भारत का उप राष्ट्रपति मनोनीत करके जनता ने अपने विवेक का परिचय दिया था और आजकल भारत के राष्ट्रपति पद पर विराजमान है।

विज्ञान के इस युग में जब कि भौतिक वाद ने मानव को बुरी तरह जकड़ रखा है, तो हमें अपने दार्शनिक राष्ट्रपति के नेतृत्व में उनकी कुशाग्रबुद्धि द्वारा भारत राष्ट्र के कल्याण की अधिक उम्मीद है।

सत्यता प्रेमी गोखले

गोखले हमारे देश के महान पुरुष हुए हैं। आज हम तुम्हें उनके बचपन की एक कहानी सुनाते हैं।

एक दिन उनके शिक्षक ने सब छात्रों को घर पर निकालने के लिये एक प्रश्न दिया। प्रश्न कठिन था। कोई विद्यार्थी उसे न निकाल सका, किन्तु गोखले अपने किसी मित्र की सहायता से उसका उत्तर निकालने में सफल रहा। अगले दिन जब शिक्षक ने देखा कि केवल गोखले का ही उत्तर ठीक है, तो उन्होंने उनको बहुत शाबाशी दी, परन्तु गोखले ने रोते हुए कहा, "यह प्रश्न मैंने नहीं निकाला, मेरे एक मित्र ने निकाला है। मैं झूठी प्रशंसा नहीं चाहता।" शिक्षक उनकी सत्यता पर बहुत प्रसन्न हुए। प्यार से छाती से लगा लिया और कहा, "तुम बहुत आदर पावेंगे।"

गोखले जीवन भर सच ही बोलते रहे और बड़े होकर देश के प्रसिद्ध नेता कहलाए।

लोक मान्य बाल गंगाधर तिलक

सन १८५७ के दिन थे। जब रत्नगिरि के एक साधारण ब्राह्मण पं० गङ्गाधर शास्त्री के यहाँ एक बालक ने जन्म लिया। नाम रखा गया बलवन्तराय। पिता शिक्षक थे, वे उन शिक्षकों में थे, जो बच्चों की मानसिक, नैतिक और शारीरिक शक्ति को विकसित करने के लिए उत्पन्न होते हैं। तिलक की माता बड़ी साध्वी और विदुषी थीं। आप बड़े होनहार थे। इन्होंने केवल आठ वर्ष की अवस्था में ही 'रूपावली', 'समासचक्र' 'अमरकोष' आदि कई संस्कृत-ग्रन्थ पढ़ डाले।

दस वर्ष की अवस्था में प्राथमिक शिक्षा समाप्त करके पूना के हाई स्कूल में भरती हुए। वहाँ से प्रवेशिका परीक्षा पास कर उच्च शिक्षा के लिए डेक्कन कालेज में प्रवेश किया। यहीं से बी० ए० पास कर आप कानून पढ़ने लगे।

विद्यार्थी-जीवन में आप गणित में इतने निपुण थे कि कठिन से कठिन प्रश्न भी जबानी हल कर लेते थे।

एक बार जब ये पूना के सिटी स्कूल में पढ़ते थे, शिक्षक ने शुद्धलेखन लिखवाया। प्रसङ्ग में 'सन्त' शब्द तीन बार आया। इन्होंने उसे क्रमशः इस प्रकार लिखा, सन्त, संत, सन्‌त। अन्तिम दो को शिक्षक ने अशुद्ध कर दिया इस पर आपने उज्र किया। अन्त में यह बात मुखाध्यापक के पास पहुँची जब उन्होंने इनकी बात को ठीक माना तब कहीं इन्हें सन्तोष हुआ। इसी प्रकार एक बार शाला में कुछ विद्यार्थियों ने मूंगफली खाई और छिलके इनकी डेस्क में भर दिये। अध्यापक ने इनसे कहा, स्पष्ट है कि तुम्हीं ने मूंगफली खाई है। इन्होंने साफ इन्कार किया। अन्त में निश्चय हुआ कि इनको छिलके फेंककर अपना अपराध मान लेना चाहिए। किन्तु इनका कहना था कि न तो मैंने मूंगफली खाई है, और न मैं छिलके फेंक सकता हूँ। अन्त में ये अपनी बात पर अटल रहे। जब अध्यापक ने दंड देने का विचार किया तब ये बस्ता लेकर घर चले गये। दूसरे दिन पिता जी ने अध्यापक के नाम इस आशय का पत्र लिखा कि यह लड़का कभी झूठ नहीं बोलता, अतएव इसे दंड न देकर कक्षा में बैठने की आज्ञा दीजिए। वही हुआ।

बी० ए० पास करके आप सार्वजनिक कार्यों में भाग लेने लगे। उसी समय 'मराठा' (अंग्रेजी) और 'केसरी' (मराठी) नामक दो साप्ताहिक पत्र निकालकर देश में राष्ट्रीय जागरण का बीज बोया।

आप भारत के प्रसिद्ध नेता थे। आपने देश की स्वतंत्रता के लिए बहुत कष्ठ उठाये। जेल में "गीता रहस्य" लिखकर बड़ा नाम पाया। आप लोकमान्य-बाल गंगाधर तिलक के नाम से संसार भर में प्रसिद्ध हैं।

"ललित कुमार"

महारानी सिसोदिनी का पत्र

स्व० श्री मैथिलीशरण गुप्त

हे ना ···! नहीं, नाथ नहीं कहूँगी,
अनाथिनी होकर ही रहूँगी।
होते कहीं जो तुम नाथ मेरे,
तो भागते क्या फिर पीठ फेरे ॥१॥
यथार्थ ही क्या मुँह को छिपाये,
संग्राम से हो तुम भाग आये।
धिक्कार है हा! अब क्या करूँ मैं,
रक्खी कहाँ मौत कि जो मरूँ मैं ॥२॥
हा! पीठ वैरी-दल को दिखा के
क्यों हार माथे पर यों लिखा के।
आये दिखाने मुँह हो यहाँ क्या,
भला बनेगा तुमसे यहाँ क्या ॥३॥
परन्तु मैं होकर वीर-बाला,
जो लोक में है करती उजाला।
देखूँ तुम्हारा मुँह आज कैसे,
सहूँ कहो तो यह लाज कैसे ॥४॥
अपने यहाँ क्या छिपने घरों में,
या रानियों के घन घाघरों में।
परन्तु भागे तुम भीरु ज्यों ही,
हुए कहो क्यों हत वे न त्यों ही ॥५॥
जो मृत्यु की थी इस भाँति भीति,
जो मेटनी थी निज रीति-नीति।
तो जन्म क्यों सत्कुल में लिया था?
क्यों व्याह राणा कुल में किया था ॥६॥
जयाब्धिजा को न वरा गया जो,
न युद्ध का सिन्धु तरा गया जो।
तो क्या मरा भी न गया समक्ष,
डूबा सभी हा! तुमसे स्वपक्ष ॥७॥
राठोर! क्या लाज तुम्हें न आई,
जो कीर्ति दोनों कुल की मिटाई।
क्या देह से है यश हाय! छोटा,
या मृत्यु से है अमरत्व खोटा ॥८॥
संग्राम में जो तुम काम आते,
तो लोक में निश्चल नाम पाते।
मैं भी सती होकर धन्य होती,
न क्षत्रिय होकर आज मैं रोती ॥९॥
न भाग्य में था यह किन्तु मेरे,
दुर्दैव हैं ये सब काम तेरे।
तू जो करे सो सब ठीक ही है,
मनुष्य विश्वास अलीक ही है ॥१०॥
माँ मेदिनी! तू फूट, मैं समाऊँ,
कुकीर्ति से मैं अब त्राण पाऊँ।
न लोक में जो मैं जन्म पाती,
तो भीरु भार्या फिर क्यों कहाती ॥११॥
नहीं-नहीं यदि मैं भीरु भार्या,
तो कौन होगी फिर और आर्या।
हाँ, है तुम्हीं ने कुल लाज खोई,
परन्तु मेरे हो न कोई ॥१२॥
सिसोदियों के वन के जमाई,
हे कीर्ति अच्छी तुमने कमाई।
आई तुम्हें लाज नाम की भी,
रक्षा न होगी अब धाम की भी ॥१३॥
सुना तुम्हें था वर वीर मैंने,
सौंपा तभी था स्वशरीर मैंने।
यथार्थता किन्तु मुझे तुम्हारी,
हुई अभी है यह ज्ञात सारी ॥१४॥
विशाल, वक्षस्थल, दीर्घ-भाल,
आजानु लम्बे, युग बाहु जाल।
थे देखने ही भर के तुम्हारे,
ज्यों चित्र में अंकित अंग सारे ॥१५॥

या क्षत्रियों का वह उष्ण रक्त,
हुआ यहाँ लो। अब है अशक्त।
भगा सके जो न विपक्षियों को,
दुराग्रही गो-धन भक्षियों को ॥१६॥
दैवात् कभी शत्रु कुदृष्टि लावें,
सोत्साह मेरे हरणार्थ आवें।
तो क्या मुझे भी तुम छोड़ भागो ?
आश्चर्य क्या जो मुँह मोड़ भागो ॥१७॥
विश्वास क्या भीत पलातकों का ?
स्वकर्म व धर्म विघातकों का ?
कर्त्तव्य से जो च्युत हो चुके हों,
क्या है वे जिसे वे न डुबो चुके हों ॥१८॥

जाओ यहाँ से तुम लौट जाओ,
तुम्हें यहाँ स्थान कहाँ ? कि आओ।
हो शून्य तो भी सिंह पौर,
है गीदड़ों को इसमें न ठौर ॥१९॥
चाहे अवज्ञा करके तुम्हारी,
मैंने किया हो अपराध भारी।
परन्तु मैं होकर क्षत्रियाणी,
कैसे कहूँ हा ! न यथार्थ वाणी ॥२०॥
मेरा तुम्हारा न मिलाप होगा,
हा ! शान्त कैसे यह ताप होगा।
विश्वेश लेवें सुध शीघ्र मेरी,
देवें मुझे मृत्यु करें न देरी ॥२१॥

अधूरा चित्र

श्री राजपाल लूथरा

रमा सोलह वर्ष की एक नवयुवती थी। अल्हड़ जवानी, गौरा वर्ण, लम्बा कद, काली आँखें, इस प्रकार लगती थी मानो कोई आकाशीय परी धरती पर उतर आई हो। उसने इसी वर्ष हायर सैकेण्डरी की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की थी। अब वह दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रसिद्ध कालिज में बी०ए० में पढ़ रही थी। हर तरफ उसी की चर्चा रहती थी। उसके पिता दिल्ली के एक प्रसिद्ध वकील थे। उनकी वकालत दिन-दूनी रात चौगुनी हो रही थी। रमा की माता एक पढ़ी लिखी, गुणवती व चरित्र-वान महिला थी, जिसका असर रमा के जीवन पर पड़ना स्वाभाविक ही था। रमा अपने माता-पिता की इकलौती सन्तान थी, इसीलिए वह खूब ही अच्छे वातावरण व लाड़ प्यार में पली थी।

रमा को प्रतिदिन प्रातः उसकी कार कालिज छोड़ आया करती थी और सायंकाल को वापिस ले आया करती थी। इसी प्रकार प्रतिदिन के इस कार्यक्रम के साथ कई माह बीत गए। अचा-नक पिताजी को किसी आवश्यक कार्य हेतु बाहर जाना पड़ा और उस दिन सायंकाल कार रमा को लेने न जा सकी और वह पैदल ही घर की ओर चल पड़ी। थोड़ी ही दूर जाने पर उसे एक वृद्ध बुढ़िया दिखाई दी। जब वह उसके पास पहुँची तो बुढ़िया ने कहा "बेटी! मुझे आँखों से दीखता नहीं है और अंधेरा हो चला है, जरा मुझे उस सामने वाले मकान तक पहुँचा दो, भगवान तेरा भला करेगा।" रमा का दिल पसीज उठा। वह उसका हाथ पकड़ उसके साथ चलने लगी। घर के पास पहुँचने पर रमा ने कहा –'लो माँ! तुम्हारा मकान आ गया, अब मैं जाती हूँ।" बुढ़िया ने कहा—"जीती रहो बेटी! भगवान तुम्हें बड़ी उम्र दे। आओ जरा अन्दर तो आओ, कम से कम इस गरीब बुढ़िया के मकान को तो देखती जाओ। थोड़ा जल तो पिओ।" रमा ने कहा—'नहीं माँ! फिर कभी आऊँगी, अँधेरा बहुत हो चला है, घर पर माँ इन्तजार कर रही होगी।" बुढ़िया ने कहा - "बेटी! तूने मुझ पर बड़ा अहसान किया है, कम से कम पानी तो पीती जाओ।" रमा बुढ़िया के इस अनुनय-विनय के आगे झुक गई और उसके साथ अन्दर चली गई।

थोड़ी देर बैठने के पश्चात रमा अपने घर जाने को तैयार हुई और दरवाजे की ओर बढ़ी तो देखते ही कि दरवाजा बाहर से बन्द है, उसके पैरों के नीचे से जमीन खिसकती नजर आई और वह चिल्लाने लगी—"दरवाजा खोलो! दरवाजा खोलो!!" और वह बुढ़िया को मारने के लिए दौड़ी। अपने मैले दाँतों से हँसते हुए बुढ़िया बोली—"अब तू सदा यहीं रहेगी, तेरे लिए सब द्वार बन्द हैं।" यह सुन रमा क्रोध से पागल हो गई और दरवाजा तोड़ने लगी। उधर वृद्धा के इशारे पर उसके नौकरों ने उसको पकड़ कर एक कमरे में बन्द कर दिया। इसी हाथा-पाई में रमा के सिर में चोट लग गई।

इसी प्रकार दो-तीन दिन बीत गए और रमा माता-पिता की याद में आँसू बहाती रही। न उसने कुछ खाया और न पीया। चुपचाप एक कमरे में पड़ी रहती। फिर एक दिन उसे एक चाल सूझी कि बुढ़िया को प्रसन्न रक्खा जाए और वह जैसा कहे उसी प्रकार किया जाय और जब भी मौका मिले, यहाँ से भाग जाऊँगी। दिन बीतते गए और रमा ने अब नाच-गाना भी सीख लिया। लोग आते उसका नाच देखते और आवाजे कसते। जिसे सुन

रमा का दिल रो उठता और वह आँसुओं को मन में ही पी जाती।

इस तरह दो-तीन वर्ष का समय व्यतीत हो गया। अब रमा पर बुढ़िया को यकीन आ गया कि अब वह यहाँ से भागकर कहीं नहीं जा सकती। एक दिन जब रमा कुछ प्रसन्न सी बैठी थी तो बुढ़िया ने कहा—"आज एक बहुत बड़ा सेठ आने वाला है, वह जैसा कहे, उसे हर तरह से खुश कर देना, बहुत बड़ी आसामी है, समझी।" यह सुनकर एकबारगी रमा का दिल काँप उठा। इतना कह बुढ़िया बाहर का दरवाजा खुला ही छोड़ रसोईघर की ओर चली गई। रमा इसी मौके की तलाश में थी। उसने आव देखा न ताव देखा और वहाँ से भाग पड़ी और भागते-भागते सीधे ही यमुना पर जाकर साँस ली। भागते समय उसने पीछे मुड़कर भी न देखा और यमुना में छलाँग लगा दी।

उधर रमा के पिता उसकी याद में अपना सब लुटा बैठे। यहाँ तक कि उनके पास खाने-पीने और रहने के लिए स्थान भी न रहा। लोगों के ताने सुन-सुनकर उनका कलेजा छलनी हो जाता और इसी व्यथा में उन्होंने संसार से नाता तोड़ दिया और रमा की माता अब पागलों की तरह दर-दर ठोकरें खाती फिर रही थी।

प्रातःकाल का समय था। सूर्य अपने पूरे यौवन पर अभी नहीं आया था। और रमा ने आँखें खोलीं और खोलते ही अवाक् रह गई। वह अपने को एक सुसज्जित कमरे में पाती है। जिसकी दिवारों के चारों ओर चित्र लगे हुए थे। अचानक ही उसकी नजर सामने बैठे एक नवयुवक पर पड़ी। रमा को देखते ही युवक ने कहा—"लीजिए! चाय पीजिए।" रमा ने कहा "आप कौन हैं? मुझे क्यों बचाया? मैं मरना चाहती थी, मेरी जिन्दगी में अब क्या है?" युवक बोला—"मेरा नाम शील है। मैं यहाँ पर चित्रकारी का काम करता हूँ, ये चित्र जो आप देख रहीं हैं, वह मेरे ही द्वारा बनाए गये हैं मैंने आपको क्यों बचाया, यह तो आप जानती ही हैं कि अगर इन्सान किसी को जिन्दगी नहीं दे सकता तो उसे मारने का क्या अधिकार है? यह तो मेरा फर्ज है, जो मैंने पूरा किया। आपका परिचय?" शील ने कहा। रमा ने कहा—"मेरा नाम रमा है" और उसने अपनी सम्पूर्ण कहानी उसे बताई। शील ने कहा "मैं आपकी मदद करूंगा, जो आप चाहेंगी। आपके माँ-बाप को ढूँढने का पूरा, प्रयत्न करूँगा।"

इसी प्रकार दिन बीतते गए। एक दिन रमा बाहर लान में अकेले बैठी कुछ सोच रही थी कि उसे अचानक एक दिन याद आया—जब सर्दी के दिन थे और वह और उसके पिताजी कमरे में बैठे थे और अचानक ही रमा का हाथ उसके पिताजी के हाथ के साथ छू गया और वह एकदम घबरा उठी और बोली "पिताजी! आपको इतना बुखार है और आप इस तरह बैठे हैं।" वह कालिज भी न जा सकी। इसी प्रकार कुछ दिन तक पिताजी बीमार रहे और चार-पाँच दिन बाद कुछ आराम आया तो रमा को पिताजी ने कहा—"बेटी! आज मेरी तबीयत काफी अच्छी है, तुम कालिज जाओ और मुझे भी एक आवश्यक कार्य हेतु जाना है। और वह उनके साथ ही कार में बैठ कर कालिज चली गई। लेकिन शाम को वह घर वापिस न जा सकी और पिता का पता भी न लगा सकी। इन्हीं ख्यालों में खोई वह वहाँ बैठी रही और उसे पता भी न चल सका कि शील कब उसके पास आकर बैठ गया।

इसी प्रकार दिन बीतते गए। रमा और शील आपस में घुल मिल गए। एक दिन रमा बाजार जा रही थी कि अचानक ही उसकी नजर एक वृद्धा पर पड़ी जो बेसुध पड़ी सड़क के किनारे सोई हुई थी। एक बारगी उसे देख उसके शरीर में कंपकपी उठ गई कि कहीं यह वह तो नहीं है। वह ढाँढ़स बाँधे उसके समीप गई और देखते ही अवाक् रह गई और माँ-माँ करते हुए गले से लिपट गई। वह एक-दूसरे को देख अवाक् रह गई और एक-दूसरी को

अपनी "आप बीती" सुनाई। रमा माँ को साथ ले शील के घर आ गई और उसके साथ परिचय कराया रमा को क्या पता था कि यह उसकी अन्तिम भेंट थी। माँ उसे देखने के लिए इस दिन की इन्तजार कर रही थी।

रात्रि का समय था। आसमान में बादल घिरे हुए थे। रह-रह कर बिजली चमक उठती। उधर हवा के झोंकों से दीपक कभी मंद होता, कभी तेज हो जाता। अचानक ही दीपक बुझ गया और इसी के साथ रमा की माँ की हृदय की धड़कन बन्द हो गई और रमा माँ ! माँ !! कहते उसके निर्जीव शरीर पर लुढ़क गई। शील यह भयानक दृश्य न देख सका और अपना मुँह लटकाए खड़ा रहा।

अब रमा का एक ही सहारा था—वह था शील दोनों आपस में मिल-जुल कर रहते और जीवन के दिन काट रहे थे। प्रातःकाल का समय था। सूर्य अभी अपनी लालिमा नहीं बखेर सका था। वह लालिमा इस प्रकार लग रही थी मानो किसी ने आकाश में खून की होली खेली हो। बाहर लान में शील रमा की लेटी हुई अवस्था में तस्वीर उतार रहा था। रमा जहाँ लेटी हुई थी उसके पीछे की ओर एक बहुत बड़ी खाई थी। अचानक ही रमा ने एक करवट बदली और धड़ाम से खाई में जा गिरी। शील यह देखते ही उसे बचाने के लिए स्वयं ही खाई में कूद गया। और दोनों ही उसकी गोद में सदा के लिए समा गए। उधर अचानक हवा का एक तेज झोंका आया और शील के हाथों बना हुआ वह अधूरा चित्र भी हवा के झोंके से उड़कर उस खाई में जा गिरा—उनके निर्जीव शरीर पर........।

शेष पृष्ठ ७ का

सभिधि सेन चतुरंग सुहाई,
महा महीप भयं पसु आई।
मैं एहिं परसु काट बलि दीन्हें,
सभर जग्य जप कोटिन्ह की ह्वे ॥

मैं केवल यज्ञ कराने वाला ही ब्राह्मण नहीं बल्कि मैंने अनेकों यज्ञ स्वयं किए हैं। निपट ब्राह्मण की भूल से जरा संभाल कर वचन कहना। मेरा धनुष स्रुवा और मेरे वाक्य आहुतियाँ हैं। मेरा क्रोध यज्ञ की धधकती आग है। क्षत्रियों की चतुराङ्गिणी सेनाएं इस यज्ञाग्नि की समिधाएँ हैं। बड़े-बड़े राजा लोग पशु-बलि के समान हैं। मैंने इस कुल्हाड़े से इस प्रकार के असंख्य पशुओं की बलि की है और समर यज्ञ किये हैं।

धन्य है भगवान परशुराम, जिन्होंने राष्ट्र के शासक क्षत्रिय वर्ग को उपदेशों द्वारा नहीं प्रत्युत अपने बाहुबल से सत्पथ पर लाने का प्रयत्न किया। उन्होंने तभी अपनी प्रतिज्ञा की पूर्ति समझी जबकि श्री रामचन्द्र के वचनों से उन्हें पूर्णतया निश्चय हो गया कि क्षत्रिय लोग अब उद्धत, मदान्ध नहीं रहे। प्रतिज्ञा पूर्ति के पश्चात वे सच्चे तपस्वी ब्राह्मण के समान सभी सम्पत्तियों का परित्याग कर पुनः महेन्द्र पर्वत की ओर तपस्या के लिये चले गये।

नमः भगवते परशुरामाय

अखिल भारतवर्षीय ब्राह्मण महासभा (रजि०) दिल्ली

की

कार्यकारिणी समिति की छटी बैठक

अखिल भारतवर्षीय ब्राह्मण महासभा (रजि०) दिल्ली, की कार्यकारिणी समिति की छटी बैठक २-४-६७, रविवार को प्रातः ११ बजे, श्री पं० शिवचरणदास जी शर्मा के निवास स्थान १५/१ तिलक नगर में प० सोमनाथ तेजपाल की अध्यक्षता में हुई। उपस्थिति बहुत उत्साहजनक थी। श्री पं० कांति प्रसाद मिश्र, मन्दिर मार्ग, श्री पं० चमन लाल ज्योतषी, तिलकनगर, श्री पं० अयोध्यानाथ गोसाईं तिलकनगर, श्री केवल कृष्ण शर्मा, किशन गंज विशिष्ट, अतिथि के रूप में पधारे थे, परन्तु वह महासभा के कार्यक्रम को देखकर इतने प्रभावित हुए कि महासभा की सदस्यता तथा "वशिष्ट" की ग्राहकता स्वीकार कर ली।

निम्नलिखित कार्यवाही सम्पन्न हुई :—

१. गत विवरण पढ़कर सुनाया गया, जिसकी सर्वं सम्मति से पुष्टि हुई।

२. प्रधानमंत्री ने मासिक विवरण का ब्योरा सुनाते हुए बताया कि इस मास में २६४ पत्र लिखे गये। १४५ रुपये प्राप्त हुए, साठ से अधिक विप्र बन्धुओं को विवाह योग्य वर कन्याओं के पते बताये गये। चार बेकार भाईयों को काम दिलाया गया। उपसमितियों की तीन बैठकें हुई। उपदेशक महोदय ने २० सदस्य बनाये, दो स्वागत समिति के सदस्य तथा सात वशिष्ट के ग्राहक बनाने के अतिरिक्त जोशी रोड, करौल बाग मलका गंज, सब्जी मंडी, जवाहर नगर, कमला नगर, शकूर-बस्ती आदि कई क्षेत्रों में प्रचार का काम किया।

३. प्रधानमंत्री ने विभिन्न प्रदेशों के विप्र-बन्धुओं के आये हुए बहुत से पत्रों का संक्षिप्त ब्यौरा सुनाया, जिससे ज्ञात होता था कि महासभा का संदेश भारत के दूर-दूर स्थानों में पहुँचने से ब्राह्मणों में सहयोग की भावना तथा जागृति पैदा हो रही है।

४. भगवान परशुराम की जयंती मनाने के सम्बन्ध में विचार विमर्श के पश्चात निश्चय हुआ कि :—

(i) परशुराम जयंती १४ मई, रविवार को बड़े समारोह से मनाई जाये।

(ii) इसका उचित प्रबन्ध करने का सारा काम श्री पं० किशोर चन्द भारद्वाज को सौंपा गया और उन्हें अधिकार दिया गया कि वह जिनको चाहें अपने साथ ले सकते हैं।

५. निश्चय हुआ कि ब्राह्मण छात्र-छात्राओं को छात्र वृत्तियाँ तथा अन्य सहायता दी जाये। इस वर्ष इस शुभ काम का आरम्भ करने के लिए मिडल परीक्षा तथा हायर सैकेंडरी, परीक्षा में अच्छे नम्बर लेकर पास होने वाले योग्य विद्यार्थियों को १०-१० व २५-२५ रुपये के दो-दो वजीफे दिये जायेंगे और गरीब लड़कों की पुस्तकों आदि के लिये सहायता भी की जयेगी।

प्रधानमंत्री ने बताया कि श्री पं० ओंकारनाथ शर्मा, एम० सी० इंजीनियरिंग कं०, ओखला ने एक वर्ष के लिए २५ रूपये मासिक का वजीफा देने का वचन दिया है। महासभा उनका हार्दिक धन्यवाद करती है।

६. श्री पं० शिवचरण दास शर्मा के सुझाव पर सहायता कोष के लिये उपस्थित सज्जनों से अपील की गई। इस पर निम्नलिखित सज्जनों ने उसी समय धन दिया :—

(i) श्री शिवचरण दास शर्मा—११ रु०

(ii) ,, देवीलाल शर्मा —११ रु०
(iii) ,, जसवन्तराय शर्मा —१० रु०
(iv) ,, अयोध्या प्रसाद गो० ५ रु०
(v) ,, अयोध्या नाथ मिश्रा ५ रु०
(vi) ,, देवराज कौशिक ५ रु० मासिक
(vii) ,, नारायण प्रकाश बख्शी ५ रु०
(viii) ,, ईश्वर दास महं ५ रु०
जोड़ ५७ रु०

इन भाईयों ने रुपये देने का वचन दिया है :—

१. श्री पं० अमरचन्द तेजपाल—११ रु०

२. ,, ,, बालकराम प्रभाकर—११ रु०

३. ,, ,, एस. डी. देव—५ ,, मासिक

आपने "वशिष्ट" के १० ग्राहकों का चन्दा देने को भी कहा। ग्राहक ऐसे हों जो 'वशिष्ट' आप पढ़ें और दूसरों को पढ़ने के लिए दे दें।

महासभा की ओर से इन सब भाईयों का हार्दिक धन्यवाद किया गया।

७. निश्चय हुआ कि महासभा के सारे सदस्यों तथा अन्य प्रतिष्ठित बन्धुओं से अपील की जाये कि वे इस कोष में यथाशक्ति कुछ न कुछ धन देने की कृपा करें।,

८. निश्चय हुआ कि आगामी क्षेत्रीय सम्मेलन उत्तरी दिल्ली क्षेत्र में करने काप्रबन्ध किया जाये। साथ ही पं० गुरुदास राम जी शर्मा से प्रार्थना की गई कि वह करौलबाग का क्षेत्रिय सम्मेलन शीघ्र ही कराने का प्रबन्ध करें। इसमें पहले ही बहुत देर हो गई है।

९. प्रधान मंत्री ने उपसमितियों का ब्यौरा सुनाते हुए बताया कि :—

(i) एकशन उपसमिति की बैठक ९.२.६७ को शाम के सात बजे २५/३०, ईस्ट पटेल नगर में डा० गिरधारी लाल गोस्वामी के कार्यालय में हुई। इसकी अध्यक्षता गोस्वामी जी ने की। विचार विमर्श के पश्चात निश्चय हुआ कि पहले किसी योग्य वकील से मश्वरा लिया जाये और फिर आवश्यक कार्यवाई की जाये।

(ii) सहायता कोष उपसमिति की बैठक भी ९.२.६७ को ८ बजे शाम २५/३० ईस्ट पटेलनगर में डा० गिरधारी लाल गोस्वामी की अध्यक्षता में हुई। विचार विमर्श के पश्चात निश्चय हुआ कि धन जमा करने के लिए इन साधनों को अपनाया जाये।

(क) विश्व शांति या देश का अन्न संकट निवारण के लिये यज्ञ की योजना बनाई जाये।

(ख) धार्मिक पुस्तकों की प्रदर्शनी की जाये।

(ग) छोटी-छोटी घरेलू इन्डस्ट्रीज का प्रबन्ध किया जाये

(घ) प्रकाशन का काम किया जाये।

(ङ) रविवार तथा अन्य छुट्टियों में विप्र बन्धुओं से मिलकर इस काम के लिये धन इकठ्ठा किया जाये।

(iii) करौलबाग क्षेत्रिय सम्मेलन के लिये एक बैठक १७.२.६७ को श्री पं० गुरदास राम जी शर्मा के निवास स्थान पहाड़गंज में श्री पं० सोमनाथ तेजपाल की अध्यक्षता में हुई। इसमें स्थान, समय, प्रधान, उदघाटन कर्त्ता के नामों पर विचार हुआ। साथ ही निश्चय हुआ कि इस महाकार्य के लिये धन एकत्रित किया जाए।

१०. निश्चय हुआ कि आगामी बैठक जोशी रोड में की जाये। इसका प्रबन्ध करने के लिये श्री पं० शिवचरण दास शर्मा तथा श्री पं० बालकराम प्रभाकर को नियुक्त किया गया।

११. श्री पं० शिवचरणदास शर्मा ने उपस्थित भाईयों का भोजनादि से खूब आदर-सत्कार किया। इसके लिये उनका हार्दिक धन्यवाद किया गया।

१२. उपस्थित सज्जनों तथा प्रधान जी के धन्यवाद के पश्चात बैठक विसर्जित हुई।

दौलतराम गंगाहर
प्रधान मंत्री
१६/७ रमेशनगर, नई दिल्ली—१५

पदाधिकारियों को बैठक

२-४-६७ को खाना खाने के पश्चात महासभा के पदाधिकारियों की एक आवश्यक बैठक श्री पं० सोमनाथ तेजपाल की अध्यक्षता में हुई। उपस्थिति उत्साहजनक थी। महासभा के काम को तेजी से करने और इसका सदेश भारत के समस्त ब्राह्मणों तक पहुँचाने के साधनों पर कुछ समय विचार विमर्श होने के पश्‍ ात निश्चय हुआ कि—

१. प्रचार का काम दिल्ली में क्षेत्रीयवार किया जाए और इसमें पदाधिकारी विशेष रूप से भाग लें। अन्य प्रान्तों में अपने रिश्तेदारों तथा मित्रों से पत्र व्यवहार किया जाये और प्रचारक को भेजा जाये।

२. महासभा के सदस्य व "वशिष्ट" के ग्राहक बनाये जायें।

३. ब्राह्मण सभायें स्थापित की जायें और बनी हुई सभाओं को प्रोत्साहन दिया जाये।

४. जो पदाधिकारी प्रचार के लिये बाहर जायें, उन्हें मार्ग व्यय दिया जाये।

५. "वशिष्ट" द्वारा भी अधिक से अधिक प्रचार किया जाये।

दौलतराम गंगाहर
प्रधान मंत्री

राजेन्द्र नगर ब्राह्मण सभा का वार्षिक उत्सव

२३-४-६७ को ३ से ७ बजे तक श्री पं० शिवदत्त जी सालवान की अध्यक्षता में बड़े समारोह से मनाया गया। उपस्थिति बड़ी उत्साहजनक थी।

किशोर चन्द्र भारद्वाज

उत्तरी दिल्ली क्षेत्रीय ब्राह्मण सम्मेलन के प्रबन्ध के लिए बिशेष बैठक

२३ अप्रैल, सन् १९६७ रविवार को प्रातः ९ बजे, १०४ ए, कमला नगर दिल्ली, में उत्तरी दिल्ली क्षेत्र के विप्र बन्धुओं की एक विशेष बैठक महासभा के प्रधान श्री पं० सोमनाथ तेजपाल की अध्यक्षता में हुई। इसमें कमला नगर, शक्ति नगर, विजय नगर, जवाहर नगर, मलका गंज, राणा प्रताप बाग, चन्द्रावल आदि क्षेत्रों के प्रतिष्ठित प्रतिनिधि उपस्थित थे। परस्पर विचार विमर्श के पश्चात निश्चय हुआ कि—

१. क्षेत्रीय सम्मेलन २१ मई, १९६७ को किया जाये।

२. इसका सुप्रबन्ध करने के लिये ३० अप्रैल, सन १९६७ रविवार को प्रातः दस बजे, कृष्ण मंदिर, डी ४ कमला नगर में एक बैठक बुलाई जाये जिसमें सम्मेलन के पदाधिकारी और स्थानादि का निश्चय किया जाये।

३. इन सज्जनों ने सहर्ष विश्वास दिलाया कि वे इस सम्मेलन को सफल बनाने के लिये यथा सम्भव यत्न करेंगे और अपने-अपने क्षेत्र के प्रत्येक ब्राह्मण घराने में इसकी सूचना पहुँचायेंगे।

शक्ति नगर—श्री पं० हरकिशन लाल शायक श्री पं० वेद प्रकाश पराशर।

विजय नगर—श्री प० बिहारीलाल भनोत।

कमला नगर—श्री पं० सोमनाथ तेजपाल, श्री पं० चक्कर धर शर्मा।

जवाहर नगर—श्री प० हरलाल शर्मा।

मलका गंज—श्री पं० गोपाल दास गोस्वामी।

राणा प्रताप बाग—श्री पं० महेन्द्र मोहन शर्मा तथा श्री पं० प्रवीण कुमार तेजपाल।

चन्द्रावल—श्री पं० यशोधानन्द शास्त्री।

४. प्रचार के लिये एक उपसमिति बनाई गई जिसके सदस्य उपरोक्त विप्र बन्धु नियुक्त हुए।

५. श्री पं० चक्कर धर जी १११ ए, कमला नगर को अगली बैठक बुलाने के लिये संयोजक नियुक्त किया गया।

दौलत राम गंगाहर

महासभा का विस्तार व प्रसार

आप यह पढ़ कर प्रसन्न होंगे कि अखिल भारतवर्षीय ब्राह्मण महासभा (रजि०) दिल्ली का कार्य

क्षेत्र दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। इसके प्रमाण में सितम्बर १९६६ के पश्चात नये बने आजीवन सदस्यों की सूची दी जाती है और साथ ही 'वशिष्ट' का विशेष शुल्क देने वाले विप्रबन्धुओं के नाम—

आजीवन सदस्य—

१. श्री पं० अमरचन्द जी तेजपाल पहाड़गंज।
२. ,, ,, गंडाराम जी तेजपाल अजमेरीगेट।
३. ,, ,, अनन्तराम जी कालिया मोती नगर।
४. ,, ,, जे० एन० जी शर्मा कीर्ति नगर।
५. ,, ,, एच० एल० जी शर्मा कीर्ति नगर।
६. ,, ,, कीर्तिकुमार जी प्रभाकर, रमेश नगर
७. ,, ,, पूर्णचन्द जी ज्योतिषी, पहाड़ गंज।
८. ,, ,, विशवानाथ जी शर्मा, लखनऊ।

नोट—श्री पं० हवेली राम जी रमेश नगर तथा श्री प० अतर चन्द जी ज्योतिषी लड्डूघाटी ने वचन दिया हुआ है।

वशिष्ट के विशेष शुल्क दाता—

१. श्री पं० डा० विजय चन्द्र जी शर्मा, अलीगढ़
२. ,, ,, शिवचरनदास जी शर्मा तिलकनगर
३. ,, ,, बालकिशन जी शर्मा, राजा वाली गली।
४. ,, आर० पी जी सरोज, गणेश लेन।
५. ,, ,, पी० टी० कालिज, चावड़ी बाजार।
६. ,, ,, टी० एन० जी भास्कर कैपिटल इंडस्ट्रीज।
७. ,, ,, जगदीश राम जी शर्मा शिमला।
८. ,, ,, मदनचन्द जी शर्मा, आनन्द पर्वत।
९. ,, ,, जे० सी० शर्मा चावड़ी बाजार।
१०. श्रीमति पं० प्रशोतम जी भास्कर, उरई।
११. श्री पं० चैतन्य स्वरूप जी कालिया, मोती नगर।
१२. ,, ,, हरबंसलाल जी शर्मा, वैस्ट पटेल नगर।
१३. ,, ,, रामस्वरूप जी शर्मा वैस्ट पटेल नगर
१४. श्री पं० अमरनाथ जी भनोत, कीर्ति नगर।
१५. ,, ,, डा० शिवानन्द जी शर्मा, दरया गंज

दौलत राम गंगाहर

अखिल भारतीय ज्योतिष परिषद का निर्णय

अखिल भारतीय ज्योतिष परिषद के तत्वावधान में दिल्ली के स्थानीय तथा देश के अन्य भागों के प्रमुख विद्वानों का सम्मेलन सनातन धर्म प्रतिनिधि सभा विद्वत्परिषद के मन्त्री श्री पं० रघुनाथ दत्तजी बन्धु की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। परिषद् के प्रधान मन्त्री डा० गोस्वामी गिरधारी लाल जी ने प्रस्ताव रखा जिस पर उपस्थित विद्वानों के भाषण हुए और प्रस्ताव सर्व सम्मति से पास हुआ कि सिंहस्थ गुरु में सिंहांश को छोड़कर विवाहादि सभी मुहूर्त शास्त्र सम्मत हैं अतः इस वर्ष सिंहांश में बृहस्पति नक्षत्र अतः सभी विवाहादि मुहूर्त्त हो सकते हैं इसीलिये भारत के प्रायः सभी पंच्चाङ्गों ने जो मुहूर्त्त लगाये हैं, उनका सम्मेलन समर्थन करता है।

गिरधारीलाल
प्र० मंत्री अखिल भारतीय ज्योतिष परिषद

सूचना

मेरे पास अच्छे घरानों के ५०० के लगभग योग्य लड़के, लड़कियों की सूची तैयार है, जो विप्र-बन्धु इससे लाभ उठाना चाहें, वह मुझे मिलें या लिखें।

दौलत राम गंगाहर
१६/७ डबल स्टोरी, रमेश नगर,
नई दिल्ली १५

"Education and Career"

I am publishing below the letter in original of Sh. S.D. Dev to bring home the fact that how Strongly and rightly Mr. Dev pus farward the importance of Education and Career for our budding youngesters. I wish our youngsters make best use of these ideas. *—Editor.*

S. D. Dev

B—135 Netaji Nagar,
N. Delhi 3.

Dear Editor,

I am grateful to you for having asked me to contribute articles on Education and Career for your esteemed Journal. I will be glad to do so. Though money and material appears to be the basic factors which determine the rate of progress, still higher standards of living are a direct result of better education imparted to our youths with a view ultimately to help them to follow a career according to their aptitude, taste, experience, talent and general background which may not only be of considerable help to the individuals but also to the State.

Human history tells us that a man when he is in a position to understand things, first of all thinks of the means to survive. Even the first man on earth taught to his children those basic things which were indispensable for living.

Our ancestors earned their living through hard work and dignity of labour remained a guiding principle for them. Jesus Christ apprenticed as a carpenter whereas St. Paul used to repair tents to earn his living. Prophet Mohammad personally attended to the house hold work such as cooking and serving food to others and preached 'God does not like the man who considers himself superior to his companions'... We also know of King Janaka and Emperor Sagara and his sons who used to toil the fields regularly to impress upon their dear subjects to dignity of labour and importance of this noble profession.

It appears we have lost sight of above principles due to which we have suffered a great deal. In the long and fascinating history of India our is an era of transition, an age of faith, a time full of work, hope and promise. We stand on the watershed of the present that divides India's glorious past from her exciting future. With the advent of freedom we require a new spirit of enthuiastic work and it is necessary that our coming generation should not rest content with the traditional occupations of Government Service in Central and State Secretariates or Post Offices. To eradicate poverty, ignorance and disease from this sacred land, to bring freedom and equal opportunity to the common man ; to build a prosperous, democratic and progressive India of our dreams; to create social, economic and political institutions which will ensure justice and fullness of life to every man and woman living in this sub-contient, a

psychological change In the tendency on the part of educated classes to secure Govt. jobs is required. What is needed is experienced engineers and craftsmen capable of exploiting India's rich natural resources and to man the projects like Kosi, Bhakra Nangal, Hindustan Air Craft, Sindri, Durgapur and Bhilai Steel Plants and so on.

I have written the above few lines just to give my ideas as to how our youth can progress and where our problems lies. I wish your esteemed journal is used to enlighten the people of India about this burning problem which our motherland is boldly facing to-day.

I understand you are celeberating 'Paras Ram's Jayanti' in May sometime. I would like to pay my tributes to the great military genius of ancient India by contributing an article on 'Career in the Armed Forces"· The article is attached.

With deepest regards to you all,

Yours very sincerely,

DEV

Shri Bharwaj Ji Editor Vashist
Z-1 Rajauri Garden
New Delhi.

Greeting his pupils, the master asked :

What would you learn of me ?

And the reply came ;

How shall we care for our bodies ?
How shall we rear our children ?
How shall we work together ?
How shall we live with our fellowmen ?
How shall we play ?
For what ends shall we live ?

And the teacher pondered these words, and sorrow was in his heart, for his own learning touched not these things.*

Courtesy Educational and career year Book by S. D. Dev.

CARRER IN THE ARMED FORCES

by

S. D. DEV

The highest form of sacrifice is self sacrifice which career in the Armed Forces provides. Career in the Armed Forces is career which require a clear call, an urge from within to serve self-lessly, to live for one's country cheerfully and to rise above all difficulties at all times.

In ancient India the art of warfare was highly prized and practiced. 'War for truth is a religious duty' preached Lord Krishna. So for a young man or a woman aspiring a future dedicated to the service and freedom of her motherland, career in the Armed Forces is the best.

The Indian Armed Forces offer excellent career to young boys and girls of intellegence and determination, who as a member of an honourable nation are prepared to undertake field operations against any enemy, in any terrain and under any climatic conditions.

Recruitment to the officer cadre of Armed Forces is open to all unmarried male citizens (excluding widower and divorcees of India, subjects of Sikkim, Gorkha subjects of Nepal & Non Gorkha subjects of Nepal can also be considered for recruitment to the Indian Armed Forces.

National Defence Academy Kharakvasla is the main source for entry to the officer cadre of the Armed Forces. Admission to this academy is open to Matriculates or its equivalents between 15-17½ years of age on the first day of the month in which the course starts. Selection is made on the basis of bi-annual examination conducted by the Union Public Service Commission followed by an interview before a Service Selection Board and a medical examination. The Union Public Service Commission notifies the entrance examination well in advance in leading newspapers. Candidates who have appeared or are to appear and hope to pass before entry to the National Defence Academy are eligible to apply for the entrance examination. On passing out from the National Defence Academy Army Cadet join the Indian Military Academy Dehra Dun, Naval Cadets join the Naval trainingship and the Air Force Cadet to the Flying College for further training.

Besides ex-National Defence Academy cadets, there are four direct entries to the Indian Military Academy.

(a) normal bi-annual entry ;

(b) technical graduates course bi-annual entry ;

(c) National cadet corps bi-annual entry and

(d) bi-annual entry of service candidates.

The process of selection for the normal entry course at the Indian Military Academy is also through the Union Public Service Commission as in the case of National Defence Academy but the minimum educational qualification required is the Intermediate or first year pass in the three year degree course or its equivalent and the age limits is 18-21 years.

Technical Graduate course caters for the, Corps of Signals, the Corps of Engineers, the Corps of Electrical and Mechanical Engineers, Military Farms Service and the Army Educational Corps. Eor this Course various Degrees and Diplomas are laid down by the respective Corps. Age limits are betwcen 20-27 years (23 and 27 in the case of Educational Corps.)

Candidates studying in the final or pre-final year of the degree and diploma courses in Engineering in the various subjects leading to the grant of prescribed technical qualifications are also granted short service commission in the Corps of Engineers, Signals, Electrical and Mechanical Engineers under University entry scheme. Direct commissions are granted in the Army Medical Corps. the R.V.F.C., the instructor Branch in the Navy and Meteological Branches of the Air Force. Qualifications and age limits are laid down by the services concerned who makes the selection.

Though normal method of recruitment of officers into the Navy is entry as cadets, still direct recruitment to meet the immediate requirements of the service in the Executive, Engineering, Eletrical, Supply and Secretariate Branches is resorted to. Notification to this effect giving the details is published in leading dailies.

The Officers cadre in the Air Force consists of seven branches :—

(a) General Duties Branch—consisting of Pilots and Navigation for flying duties ;

(b) Technical Branch—comprising of Engineering, Electrical, Signals and armament officers.

(c) Administrative and Special Duties Branch, catering for administrative intelligence, codes and ciphers, motor transport, photographic, catering and air traffic control duties.

(d) Equipment Branch.

(e) Accounts Branch.

(f) Metreorological Branch.

(g) Education Branch.

There is also a direct entry to the GD Branch. The minimum qualification is Matriculation or its equivalents and the age limit is 17-21 which provides an opportunity for those matriculates who have become overage for entry to the National Defence Academy.

Minimum educational qualifications for other Branches are degree and diploma, as laid down by the branches concerned. Lower and higher age limits are 21 to 23 for GD and Equipment Branches, 21-27 (depending on educational qualifications for the accounts Branch) and 21-25 years relaxable upto 21 for the Educational Branch. Direct Commissions are granted in the Technical and Meteorological Branches.

Before World War II Officers of the Indian Medical Service who had 5—7 years service were sent to United Kingdom for a course which included clinical training in civil medical institutions. Officers who wished to specialise were attached to the Royal Army Medical College. In India, medical officers were sent to selected civil and military hospitals and institutions for various courses.

In 1947 the Government of India set up an 'Armed Forces Medical Services' and 'Research Integration Committee' under the chairmanship of late Dr. B.C. Roy. This Committee recommended the formation of an Armed Forces Medical College so that medical officers belonging to the Army, Navy and Air Force could have training at one central institution where proper facilities for training and research could be provided on modern lines, without duplication of effort or frittering away of resources. The Committee also emphasised the importance of collaboration of the Armed Forces Medical Services with civilian teaching and research institutions. With these aims and objectives an Armed Forces Medical College (A.F.M.C.) was set up at Poona on 1 May, 1948.

The Armed Forces Medical College is primarily a post-graduate institution, which trains medical and Dental officers of the three Services to be Specialists in various branches of medicine. surgery and Dental Surgery. It also conducts orientation courses for civilians who join the A.M. Corps, and refresher courses for officers who have served 7—8 years.

The Armed Forecs require a large number of para-medical personnel, fully trained and experienced to assist the Specialists. The Armed Forces, trains civilians who are recruited in the other-ranks category. Such personnel after a spell of training in basic military subjects are sent for higher training in specialised subjects to A.F.M.C. The A.F.M C. conducts long courses for the training of Dispensers, Laboratary Assistants, Laboratory-Technicians, X-Ray Assistants, Radiographers, Sanitary Assistants, Blood-Transfusion Assistants and Dental Hygienists. Training in some other subjects like Operation Room Assistants, Mental Nursing Assistants and Physiotherapy Assistants, is given in selected hospitals. Some of these courses are already recognised by State Governments etc. as equivalent to Diplomas given by recognised civilian institutions. The other courses are in the process of being re-eognised. This will enable qualified Armed Forces personnel to be suitably employed in the civil on their retirement from Service.

The A.F.M.C. is affiliated to the Poona University under those territorial jurisdiction it is located, for various Post-Graduate Courses.

The College also conducts Advanced Specialists Courses in subjects other than the above, to meet the requirements of specialists in various subjects.

The facilities existing at A.F M C. were further expanded in July. 1962 and a Graduate wing was set up to run the M.B.B.S. course. This wing is organised like civilian medical colleges and admits 120 students for the M B.B.S. course of Poona University each year. Students are sclected from all over India on the basis of a competitive written test followed by an interview, held at various centres in the country. 60 of the best selected students are granted stipend and are called Medical Cadets. They have the liability to serve the Army Medical Corps as Commissioned Officers on completion of their M.B.B.S. cour.e. The establishment of the Graduate Wing is a landmark in the history of medical education in the Army. The aim is to produce not only efficient doctors for the Armed Forces, but also to bring up a cadre of active, intelligent and disciplined young men and women who will be an asset to our country.

At present there are four Probationer Nurses Schools at Poona, Delhi, Ludknow and Jullundur for the Army, one at INHS ASVINI, Bombay for the Navy and one at No. 8 Air Force Hospital, Secunderabad for the Air Force, where girls receive three years' training in nursing. On completion of this training they take the State Registered Certificate examination in General Nursing. Successful candidates are commissioned in the Military Nursing Service.

Plans for the estsblishment of a Nursing College Wing at the A.F.M.C. have been finalisced and B. Sc. (Nursing) Course will be instituted shortly.

Boys over 14 years and under 15 years of age possessing 6th class or its equivalent standard and physically fit are enrolled in the Corps of Engineers, Signals, and E.M.E. for trainsng to provide trained craftsmen for the Army. These trainees are clothed, housed, paid and looked after by the Army. A list of trades for which these trainees are trained fcr a particular Corps is as under :—

Corps of Engineers.

Artificer Excavating Machinery

Draughtsman Railway

Draughtsman Mechanical

Electrician

Fitter

Machinist

Operator Excavating Machinery

Bricklayer
Carpenter and Joiner
Driver Plant and M.T.
Surveyor Railway
Draughtsman Topegraphical
Engine Artificer
Surveyor Topographical
Welder
Engine Fitter
Engine Driver Steam
Moulder
Painter & Decorator

Corps of Signals

Line Mechanic
Radio Mechanic
Draughtsman Signals
Operator Keyboard and Line.
Telegraphic Mechanic.
Operator Wireless and Line
Operator Switchboard and Line

Out of $3\frac{1}{2}$-4 years training period $2\frac{1}{2}$ years are spent in the Boys Battalions concerned and $1\frac{1}{2}$ years for the respective recruits training Battalions.

Physically and medically fit boys between $15\frac{1}{2}$ to $16\frac{1}{2}$ years of age, and educated upto 2 years pre-matric or above are also enrolled in the Indian Navy for 10 years active service to count from the date of attaining 17 years of age. They are trained in different branches of service, viz. seaman, communications, engineering, Mechanic and electrical according to their aptitude and requirement.,

Candidates who fulfil the conditions should apply to the nearest Recruiting officer.

In view of specialised training ample opportunities exists for ex-boys to obtain commissions and in due course to rise to the highest rank in the Army.

The Indian Army, Air Force and Navy offers career to spirited young men of intelligence and determination. Apart from a choice between the three Services—Army, Navy and Air force—there is, within each Service, a wide variety of careers. In the Army alone there are a dozen branches offering scope for varied types of talents Similar opportunities exists in the Navy and the Air Force. Our Armed Forces also offer career to girls in the medical and nursing branches. Recruitment Offices located in important towns are at the disposal of young boys seeking admission in the Armed Forces as career.

MAKE NEW FRIE.,DS
BUT KEEP THF OLD
THESE ARE SILVER
THOSE ARE GOLD

Quotable Quotes

[*Collected by Banwari Lal 'Ageet'*]

Tact fails the moment it is noticed.

—Edward Longstreth—

The three really great things in the world are a mountain, the clean and an earnest man at his work. The potentialities of each are beyond human calculations.

—Edward Book—

A friend is one before whom I may think aloud.

—R. W. Emerson—

Trivial matters take up more time for discussion because some of us know more about them than we do about important matters.

—Theodore Weiss—

No man is really old until his mother stops worrying about him.

—William Ryan—

He who believes in nothing still needs a girl to believe in him.

—E. R. Huessy—

A well-adjusted person is one who makes the same mistake twice without getting nervous.

—Jame Heard—

I always like to bear a man talk about himself, because then I never hear anything but good.

—Will Rogers—

The quickest way to do many things is to do only one thing at a time.

—The Irish Digest—

Man is a animal, and much more so in his mind than in history. He may like to go alone for a walk but he hates to stand alone in his opinions.

—George Santayana—

Ideas should be received like guests—in a friendly way, but with the reservation that they are not to tyrannize their host.

—Alberto Moravia—

Two things indicate weakness—to be silent when it is proper to speak, and to speak when it is proper to be silent.

—Persian Proverb—

What does it matter if one is poor, and risk is one's livelihood and reputation. One can have the necessary things, life, lover, and clean warmth.

—D. H. Lawrence—

Usually parents who are lucky in the kind of children they have, have children who are lucky in the kind of parents they have.

—B. T. S.—

One of the tests of leadership is the ability to recognize a problem before it becomes an emergency.

—Arnold Glasow—

Good Thoughts

1. Good transaction is profitable unless both parties profit by it.
2. It is better to give than to lend. It costs almost the same in either case.
3. Be sure you are right. Then go ahead.
4. Hard work or hard time ? It is up to you to go in for the farmer to present the farmer to prevent the latter. Prevention is better than cure.
5. No one ever got lost on a straight road.
6. Your community FIRST, your family SECOND, and yourself LAST.
7. Be kind. For every one you meet is fighting a hard battle.
8. I had no shoes and I grumbled, until I met a man who had no feet.
9. I slept and dreamt that life is beauty, I woke and found that life is duty.
10. Hard work is its own reward.
11. A fault confessed is half redressed.
12. Laugh and the world will laugh with you. Weep and you weep alone
13. When cheer is lacking, friends will be packing.
14. The fools are made of wood, if the workman is not good.
15. Let me know the company you keep and I shall let you know the character you bear.

(K. C. D.)

Symptoms of Mental Ill-Health

Negligence in dress.
Strangeness in habits.
Sadness and gloom.
Failure of memory.
Clouded judgment.
Wandering of the mind.
Lack of concentrated thinking.
Want of self-control.
Illusion.
Obsession.
Hallucination.
Superstition.
Apprehensiveness.
Worry.

Do introspection once a while. Look for the cause of existencc of any one of the above, if it be present in the mind. Eradicate it and cultivate its opposite. And enjoy cheerful good mental health.

(K. C. D.)

Edited & Published by Som Nath Tejpal 104-A, K... Nagar, ... Manager of "Vashishat" masik and Printed at Brahma Printing Press, Bazar Sita Ram, Delhi Phone 265762